प्रकाश

सादर समर्पित

ओंकार नाथ प्रभाकर

26/2/2023

- अपनी रक्षा आप करें।
- मांसाहार निषेध है।
- मस छुय वस
  (महिलाओं का बाल काटना शास्त्र विरुद्ध है।)
- गीता पढ़िये।
- माता पिता के चरणो में स्वर्ग है।
- अपनी सभ्यता तथा संस्कृति की रक्षा करें।

को मनाने के प्रति उनका भी आकर्षण बढ़ रहा था।

कश्मीरी पण्डित समुदाय की महिलाएं जो विस्थापन से पूर्व 'करवा चौथ' का व्रत नहीं रखती थी, उस सात्विक क्रिया को सुहागिन महिलाओं ने अपने में आत्मसात् करते हुए पति की दीर्घायु के लिए इस कठोर व्रत को अपनाया। प्रायः कश्मीर में महिलाएं संकट चतुर्थी का व्रत धारण करती थीं, जिसका प्रयोजन कुछ और होता था। घाटी में जब चैत्र मास व आश्विन मास में देवी के नौ रूपों का पूजन नवरात्रों (नवरात्रि) में शुरू होता था, तो विशेषकर अष्टमी के दिन कश्मीर में देवी स्थलों में महायज्ञ का अनुष्ठान किया जाता था और देवी स्थलों पर प्रत्येक दिन प्रातः पूजा अर्चना के लिए जाया जाता था। अब विस्थापनकाल में कुछ विशेष विधियां भी जुड़ गईं हैं। जम्मू तथा देश के अन्य भागों में कहीं देवी माता का साख के रूप में और कहीं मूर्ति के रूप में विसर्जन होता है।

विस्थापन के बाद कश्मीरी पण्डित समाज ने भारतीय पर्वों को मनाने के इस ढंग को आत्मसात करते हुए नवरात्रों में मंदिरों-निर्वासित घरों में साख के रूप में देवी माता का पूजन कर नौवें-दिन उसे नदी में विसर्जित कर अपने को धन्य पाया।

कश्मीरी पण्डित समाज ने कुछ पाया है और बहुत कुछ खो भी दिया है। विस्थापन के बाद त्योहार-पर्व तो मनाए, पर उस रस और चाव के साथ नहीं मना सके, जिस ऊर्जा, उत्साह के साथ वे अपने पैतृक स्थानों में मनाते थे। कुछ परिवर्तन परिस्थितियों के कारण भी हुए, पर सांस्कृतिक पर्वों, त्योहार, उत्सवों का क्रम रुका नहीं।

कश्मीरी पण्डित समाज के इन्हीं पर्वों / त्योहारों / उत्सवों

की यथास्थिति की चिंता करते हुए पं0 प्रेमनाथ शास्त्री सांस्कृतिक शोध संस्थान ने सन् 2017 में जम्मू में कश्मीरी पण्डितों के धार्मिक-सांस्कृतिक सम्मेलन का आयोजन किया था, जहां कश्मीर की सांस्कृतिक विरासत, इतिहास, धर्म, दर्शन के ज्ञाता विद्वतजनों ने विचार विमर्श किया। यह हर्ष का विषय है कि शोध संस्थान ने इस दो दिवसीय धार्मिक सांस्कृतिक सम्मेलन में विद्वानों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों, सम्मेलन में पढ़े गए 22 शोध पत्रों, आलेखों को संकलित कर 'प्रकाश' नाम से पुस्तक का रूप दिया है। इनमें संस्कृत का एक, हिन्दी के ग्यारह, कश्मीरी के तीन तथा अंग्रेज़ी के सात आलेख हैं।

इन आलेखों के रचयिताओं में शैवाचार्य प्रो0 मखन लाल कुकिलू, जम्मू कश्मीर के इतिहास, समसामयिक विषयों पर गहरी पैठ रखने वाले स्तम्भकार लेखक श्री शिबन खैबरी, हिंदी-कश्मीरी भाषा साहित्य के प्रतिष्ठित कवि-लेखक श्री महाराज कृष्ण संतोषी, सांस्कृतिक कश्मीर को अपने गहन-चिंतन मनन में उतारने वाले श्री प्रदीप कौल खोड़बली, कश्मीरी-हिंदी भाषा के मर्मज्ञ कवि-लेखक श्री प्यारे हताश, कश्मीर की सांस्कृतिक विरासत पर अनवरत लिखने वाले सिद्धहस्थ लेखक श्री उपेंद्र अम्बारदार तथा जम्मू कश्मीर के जाने माने लेखक डा0 आर0 एल0 भट्ट का नाम उल्लेखनीय है। इस के अतिरिक्त 'विस्थापन के प्रभाव से अछूते नहीं रहे कश्मीरी पण्डितों के त्योहार', 'अख गाशितारुक, कश्यपाचार्य प्रेमनाथ शास्त्री' नामक आलेख भी पाठकों का ध्यानाकर्षित करेंगे। दिवंगत श्री मोहन लाल आश और डा0 फूला कौल के पहले से संकलित मूल्यवान विचार भी संगृहीत किए गए हैं।

'प्रकाश' नामक सद्य प्रकाशित पुस्तक आपके हाथों में सौंपकर शोध संस्थान को अपूर्व प्रसन्नता हो रही है। इस आयोजन में मुझे भी जोड़कर संस्थान ने उपकृत किया है।

पुस्तक के संदर्भ में सुधी पाठकों/आलोचकों की प्रतिक्रियाओं एवं सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी।

प्रो0 (डा0) महाराजकृष्ण भरत
राजकीय स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय
गांधी नगर जम्मू

दो शब्द

नीलमत पुराण में लिखा है :

सौन्दर्यस्य पराकाष्ठा स्वयं कश्यप नन्दिनी
कश्मीराख्या सदाभाति सदानन्दा गृहे गृहे।।

अर्थात्: *महामुनि कश्यप की मानस पुत्री 'कश्मीर' प्राकृतिक शोभा से ओत प्रोत है, घर घर यहां आनन्द की खान है। सर्वत्र सौन्दर्य की पराकाष्ठा है, इस की शोभा का वर्णन जितना भी किया जाए कम है।*

यह भूमि ऋषियों, मुनियों तथा महान् आत्माओं की तपस्थलि रही है। इस को 'भूतल स्वर्ग' भी कहते हैं। इस भूतल स्वर्ग पर 1990 में एक महाविपदा ने आतंकवाद के रूप में जन्म लेकर यहां के शान्त वातावरण को नष्ट भ्रष्ट किया जिस के फलस्वरूप यहां के अल्पसंख्यक समाज को पलायन करने पर विवश होना पड़ा। इन प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण हमारा समाज पूरे विश्व में बिखर गया, हमारी संस्कृति, रीति रिवाज, रहन-सहन, खान-पान तथा हमारे संस्कारों पर क्या-क्या प्रभाव पड़े इन्हीं विषयों पर

पं0 प्रेम नाथ शास्त्री सांस्कृतिक शोध संस्थान

ने आज से चार वर्ष पूर्व अक्तूबर 2017 में राजकमल गार्डन जम्मू में एक धार्मिक सम्मेलन का आयोजन किया था जिस में कश्मीरी समाज के महान् विद्वानों, लेखकों बुद्धिजीवियों, कवियों इत्यादि ने अपने विचार लिपिबद्ध कर लेखों द्वारा प्रस्तुत किये, उन्हीं लेखों को उनके ही शब्दों में प्रस्तुत करने का प्रयास 'प्रकाश' के रूप में किया जा रहा है।

प्रकाश के प्रकाशन में देरी का विशेष कारण गृहस्थ के कई कारणों तत्पश्चात् कोविड-19 के भयंकर रूप का है।

अध्यक्ष

पं0 प्रेमनाथ शास्त्री सांस्कृतिक
शोध संस्थान (बिजबिहारा), जम्मू कश्मीर
94191-33233

पं० प्रेमनाथ शास्त्री

सांस्कृतिक शोध संस्थान का कार्य क्षेत्रा

1- पं० प्रेमनाथ शास्त्री के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर अनुसंधान कार्य करने की व्यवस्था करना।

2- कश्मीर के प्राचीन सांस्कृतिक इतिहास का पुनर् मुल्यांकन तथा धार्मिक सांस्कृति सम्पदा की जानकारी प्रदान करना।

3- संस्कृत भाषा और शारदा लिपि पढ़ाने की व्यवस्था करना।

4- कर्मकांड विधि से जनता को परिचित कराना।

5- युवा मानस को अपनी भव्य परम्परा से परिचित कराना।

6- यज्ञों, विचार गोष्ठियों, समिनार तथा बाल प्रतियोगिताओं का आयोजन।

7- विविध कलाओं से जुड़े कार्यक्रम तैयार करना।

8- एक शोध पुस्तकालय की स्थापना आदि।

लक्ष्य महान् है, पथ अगमय, साधन अल्प, दिशाएँ धूमिल लेकिन आकांक्षाएँ सम्भव के वक्ष को चीर कर आगे बढ़ने की प्रेरणा दे रही है।

अध्यक्ष
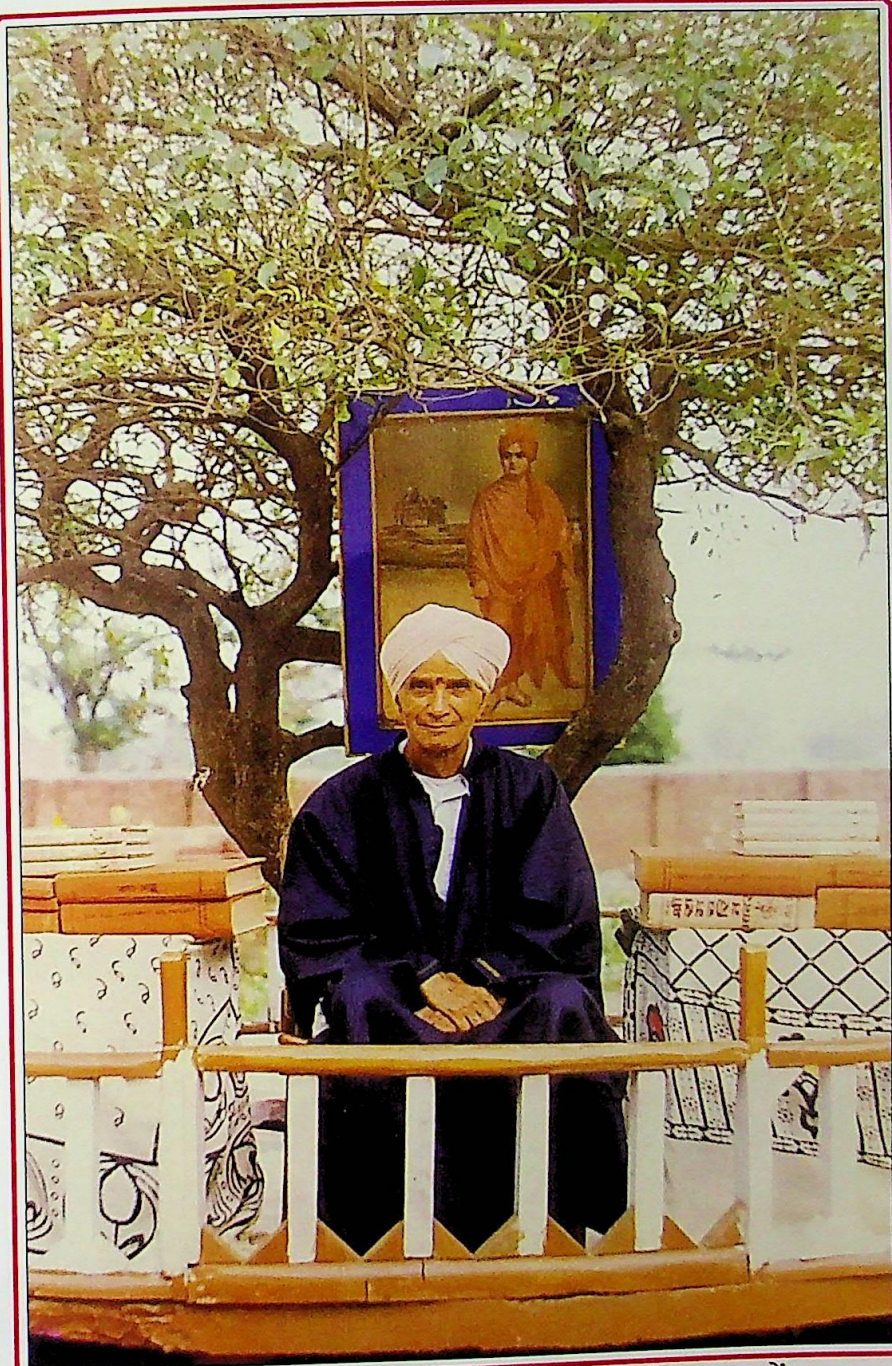
पं. प्रेमनाथ शास्त्री जी अपने निवासस्थान के प्रागण में

विषयानुक्रमणिका

1	श्रद्धांजलि — (प्रो0 मखन लाल कुकिलू)	1
2	कश्मीर शैवदर्शन — (प्रो0 मखन लाल कुकिलू)	3
3	कश्मीरी पण्डितों की दशा और दिशा — (शिभनजी खैभरी)	21
4	निर्वासन और उत्सवधमिर्ता — (महाराज कृष्ण सन्तोषी)	29
5	कश्मीर की महान् सांस्कृतिक विभूति — (प्रदीप कौल खुडबली)	33
6	अख गाशि तारुक प्रेम नाथ शास्त्री — (प्यारे भान)	40
7	गुरु तेग बहादुर और कश्मीर — (महाराज कृष्ण सन्तोषी)	41
8	मातृ शक्ति के प्रति एक धरोहर का फूल — (स्व डा0 फूला कौल)	46
9	पवन सन्ध्या — (स्व डा0 फूला कौल)	48
10	शैवाचार्य लक्ष्मण जू का व्यक्तित्व — (प्यारे हताश)	50
11	धन त ध्यार — (प्यारे हताश)	59
12	हेमकुंड साहब — (प्यारे हताश)	59
13	मूर्ख मँनुशो सत्त कर्म कर — प्यारे हताश	61
14	प्रेम नाथ शास्त्री — स्व0 श्री मोहन लाल आश	63

15 विस्थापन के प्रभाव से अछूते नही रहे
कश्मीरी पण्डितों के त्योहार - डा0 महाराजकृष्ण भरत 68

16 Jyotishacharya Pandit Prem Nath Shastri –
An eventful Ocuvre — Upender Ambardar 74

17 Kashpacharya Pt. Prem Nath Shastri —
Krishna and Preduman Koul 80

18 Lal Prakash Vision for All —
Late Dr. Phoola Koul 87

19 Hallowed Groves of Kashmir —
Upender Ambardar 90

20 Mahmaeshwar Acharya Abhinawgupta —
Upender Ambardar 95

21 Sanskaars in Third Decade of Exile —
Dr. R.L. Bhat 101

22 Kashmiri Pandit Festivals and Rituals —
Upender Ambardar 104

23 विजयेश्वर वंशावली

श्रद्धांजलि

1 द्विजवृन्द सुपूज्याय धन्याय गुणशालिने।
गुणागाराय दान्ताय श्री प्रेमनाथ शास्त्रिणे नमः।।

2 सुव्रतस्थाय भक्तानां सन्मार्ग-दर्शकाय च।
अनुत्तराय दक्षाय श्री प्रेमनाथ शास्त्रिणे नमः।।

3 धर्म कार्य धुरीणाय धर्मतत्त्वाव बोधिने।
सर्वधर्म स्वरूपाय श्री प्रेमनाथ शास्त्रिणे नमः।।

4 वयोवस्था विहीनाय अख्याति तम हारिणे।
प्रद्युम्नपीठ सूर्याय श्री प्रेमनाथ शास्त्रिणे नमः।।

5 वेदान्त शास्त्र विज्ञाय व्यासाय परमेष्ठिने।
ध्यानध्येय स्वरूपाय दैवज्ञ-मणये नमः।।

6 त्वन्नाम स्मरणं राति नैर्मल्यं सततं हृदि।
विहाय बन्धनं सर्वं नरः प्राप्नोति तत्पदम्।।

7 कारुण्य मूर्ति रूपाय दरस्मेराननाय ते।
सहानुभूति उत्साय दानवीराय नौम्यहम्।।

8 भव्य सुगन्धि द्रव्याणामामोद बृंहितं भृशम्।
त्वद्रूपं हन्ति द्राक् सर्वं पूर्व जन्मा र्जितमघम्।।

9 काव्यालाप विशेषेण अधरीकृत धीगुरुः।
विद्यावतां वरेण्येन येन तस्मै नमो नमः।।

10 वदान्यः सु प्रसन्नात्मा वेदवेदांग पारगः।

व्याख्याता सर्व शास्त्राणां यः स तस्मै नमो नमः।।

11 मन्दस्मितेन भक्तानां सर्वसन्ताप हारकः।

नक्षत्र विद्याग्निना येन ज्ञानहेति प्रकाशिता।।

12 रम्योष्णीषधरः श्रीमान् सुवेषाढ्यः सफूर्तिदः।

बभौ विद्वत्सभागारे विधुस्तारा गणे यथा।।

13 उपायन सुसंस्कारे तत्त्ववित् मन्त्रमूर्तिमान्।

मह्यां महीयसे देशे आसीद् प्रतिघातकः।।

14 आतंकवाद वातेन चकम्ये संस्कृति स्थिरः।

काश्मीरिका पुनर्येन स्वधिया स्थिरी कृता।।

15 धीमान् शास्त्री प्रेमनाथ सर्व लक्षण लक्षितः।

स्वीया सत्त्वध्िया नित्यं भूयात् सन्मार्ग दर्शकः।।

16 भाव प्रसूनैः विकसत् पिकेन

मालार्पिता मोदयुता स्वभक्त्या।

वांछे विद्वद्वर्य पदाम्बुजानां

कृपा परा स्यात् भवतारिणी सदा।।

प्रो0 मखन लाल कुकिलू
एम0ए0 (संस्कृत) एम0ए0(हिन्दी) शास्त्री
एम0ओ0एल साहित्याचार्य

कश्मीर शैवदर्शन - आधुनिक युग में इसकी उपादेयता

प्रो० मखनलाल कुकिलू

यदि हम मानवजाति की ओर निष्पक्ष–रूप से देखेगें तो यह स्पष्ट होता हैकि मानवजाति आज के युग में अपने अस्तित्व के लिए कठोर संघर्षरत है और मानसिक शान्ति के लिए आकुल है। इस आत्मिक शान्ति को, वह तनाव पूर्ण जीवन रूपी मरूस्थली में, जल प्राप्ति के समान सौभाग्य का सूचक समझती है। सुरम्य और सौहार्दपूर्ण वातावरण में हम कैसे रहे, इस ध्येय को पाने के लिए हमें अपने ऋषियों और सन्तों की दैनिक क्रिया और जीवन चर्या का भली–भांति अवगाहन करना पडेगा। यह एक महत्वपूर्ण बात हैकि हमारे आधुनिक युग के असाधारण बुद्धिजीवियों तथा उच्चकोटि के वैज्ञानिकों की विचारधारा में भी आध्यात्मिक तथ्यों के पर्यालोचन तथा उनकी महत्ता का प्रतिबिम्ब दिखने को मिल रहा है। कश्मीर शैवदर्शन के सिद्धों ने भी कई ऐसे सत्य संसार के सामने रखें है जिन्हें आजकल के भौतिक शास्त्रियों ने भी महान् वैज्ञानिक तथ्य के रूप में स्वीकारा है। कश्मीर शैवदर्शन के ऐतिहासिक साक्ष्य को टटोलते हुए हमें मोहनजोदड़डों और हढप्पा से जो सामग्री मिली सर जॉन मार्शल के अनुसार हमें इस बात की पुष्टि होती है कि शैवमत का इतिहास पाषाणयुग अथवा उससे भी प्राचीन है तथा वह विश्व का सबसे प्राचीन दर्शन है। जहां तक इस शैव आंदोलन का प्रश्न है यह ३००० ई०पू० भारत में विद्यमान था। भारत में विभिन्न कालों में अनेक शैवागम सम्प्रदाय प्रकट हुए, इनमें "महापाशुपत" अथवा "नकुलीश पाशुपत" आन्ध्र प्रदेश में विकसित हुआ, "शैव सिद्धांत" अथवा "दक्षिण शैव सिद्धांत" तमिलनाडू में तथा "वीर शैवमत" कर्नाटक में विकसित हुआ। "शाक्तमत" का

प्रचार समय–समय पर भिन्न भिन्न भागों में हुआ और "कश्मीर शैव दर्शन" का जन्म कश्मीर में हुआ। इस प्रकार हम देखते है कि आगम संस्कृति यद्यपि द्रविड़ संस्कृति है पर आर्य संस्कृति के साथ धीरे धीरे मिलकर सारे देश में इसका विकास हुआ और शैवधर्म भारत के कोने कोने में धार्मिक आंदोलन के रूप में पहुंच गया। यद्यपि विभिन्न प्रचलित धार्मिक परम्पराओं का इस पर पर्याप्त प्रभाव पडा फिर भी आगम संस्कृति की मूल भावना सर्वत्र समान रूप से सभी सम्प्रदायों में विद्यमान रही। इन सम्प्रदायों में प्रत्येक अपनी कुछ विशेषता लिये है और प्रत्येकका अपना अलग साहित्य है। इन सम्प्रदायों के धार्मिक सिद्धांतों के स्त्रोत शैवागम अथवा शैवतंत्र थे। परम्परा से प्राप्त इस आगम शास्त्र का श्री वसुगुप्त (ई० नवीं शताब्दी) तथा इनके शिष्यों ने प्रचार किया तथा घाटी में व्याप्त बौद्ध प्रभाव को ध्वस्त तथा इससे जुड़ी विचारधारा को धीरे धीरे निरस्त का दिया। साहित्यिक गगन जिन प्रचण्डरश्मि वाले मार्तण्डों से लगभग छः सौ वर्षों के लिए प्रदीप्त रहा उनमें आचार्य वसुगुप्त, श्री सोमानन्द, आचार्य उत्पलदेव, श्री राम कण्ठ, श्री शभुनाणि, लक्ष्मण गुप्त, आचार्य अभिनवगुप्त, क्षेमराज, योगराज आदि प्रसिद्ध है। इन मनीषियों ने अपनी प्रखर प्रतिभा से शैव दर्शन की बारीकियों का जिस तरह जनमानस में समझाने की पहल कही उसका ज्वलन्त उदाहरण इनकी असाधारण रचनायें है जिनकी महता आज तक उत्तरोत्तर बड़ती जा रही है। बौद्धमत की दार्शनिक धाराने लगभग तीन शताब्दियों तक कश्मीर में अपना साम्राज्य स्थापित किया था। इससे प्रचलित शैवधारा पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। शैवधर्म के अस्तित्व को खतरे में पडा देखकर भगवान श्रीकण्ठनाथ ने आचार्य वसुगुप्त को समपने में आकार यह आदेश दिया कि कश्मीर में 'हारवन' के पास महादेव नामक पर्वत पर एक बड़ी शिला, जिसका मुंह नीचे होगा, पर शिवसूत्र खोदे पड़े है, आप जाकर अपने पैर से उस शिला को उलटाकर उन शिवसूत्रों का

खूब प्रचार करो जिससे बौद्धधर्म धीरे धीरे निरस्त होगा और घाटी में पुनः शैवसिद्धांत का प्रचलन होगा। आचार्य वसुगुप्त ने ऐसा ही करके इन शिवसूत्रों का प्रचार किया और भट्टकल्लट नामक इनके ही शिष्यने इन सूत्रों पर टीका लिखी फिर श्री भास्कर ने इन का विस्तार पूर्वक विवेचन किया क्योंकि इन सूत्रों में गागर में सागर है। महत्वपूर्ण आगम ग्रन्थ होने के नाते बहुत से विद्धानों ने इन पर अपनी लेखनी उठाई पर श्री क्षेमराज की विमर्शिनी नामक टीका विस्तृत औरसारगर्भित है। इसमें अनेक उद्धरण अन्य आगमों और तंत्रों के दिये गये है जिनसे इसकी उपादेयता में वृद्धि हुई है। श्री सोमानन्द अद्वैतशैव दर्शन पर लिखने वाले पहले विद्वान थे जिन्होंने 'शिवदृष्टि' नामक दार्शनिक ग्रन्थ की रचना की। इनके प्रधान शिष्य श्री उत्पलेदव थे जिन्होंने अपने गुरु की रचना 'शिवदृष्टि' की टीका की और साथ ही अनेक रचनाओं से शैवदर्शन को समृद्ध किया, जिनमें श्री ईश्वरप्रत्यभिज्ञा महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इस महान् ग्रन्थ की महत्ता इस बात से आंकी जाती है कि कश्मीर शैवदर्शन को प्रत्यभिज्ञा दर्शन के नाम से भी पुकारा जाने लगा। संस्कृत वाड्मय में भक्ति स्तोत्र सैकड़ों मिलते है पर इनका लिखा हुआ ग्रन्थ शिवस्तोत्रावली बेजोड़ है। कारण यह कि यह स्तोत्रावली समावेशदशा से अभिभूत बने हुए कवि हृदय की भावगंगा है। इसमें भक्ति है, नम्रता है, विवशता है, करुणा है, उन्माद है, आर्त पुकार है, दैन्य है, ग्लानि है, अभीष्ट से शिकवा है और आत्मसमर्पण है। ईश्वरप्रत्यभिज्ञा पर इन्होंने विवृत्ति नाम की टीका लिखी जिसका उल्लेख केवल अन्य शास्त्रों में मिलता है पर पुस्तक अप्राप्य है। सिद्धित्रयी नामक तीन भिन्न रचनाओं में शैवदर्शन के क्लिष्ट सिद्धांतों पर खुल कर प्रकाश डालने का इन्होंने प्रयास किया। एक साधारण गृहस्थी होकर आचार्य उत्पलदेव ने अनुत्तर मार्ग में जिस चरमसीमा को पार किया वह अनुपम है।

कश्मीर शैवदर्शन महारण्य में आचार्य अभिनव गुंप्त शैवदर्शन केसरी के नाम से विख्यात है। इनके प्राप्त ग्रन्थों में महत्त्वपूर्ण तथा सर्वातिशायी श्रीतंत्रालोक है जिसमें ३७ आह्विक या volume है। यह सारे शैवआगम परम्पराओं का एक आदर्श ग्रन्थ है। इसलिए आचार्यों ने इसे 'अशेषागमोपनिषत्' नाम से भी पुकारा है। यदि कश्मीर शैवदर्शन का इसे Encyclopedia कहे तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। यह ग्रन्थ आचार्य अभिनवगुप्त के बहुमुखीय व्यक्तित्व का एक आकार ग्रन्थ है।कश्मीर शैवदर्शन, त्रिकदर्शन के नाम से भी पुकारा जाता है। नर शक्ति शिवात्मक त्रिकम् अर्थात् जिसमें नर (जीव) शक्ति और शिव का समन्वय हो उसे त्रिक कहते हैं। अथवा नरात्मकता शक्तिमता और शिवात्मकता के स्पवरूप को क्रमशः प्रकट करने वाले आणव समावेश, शक्ति समावेश और शैव समावेश ही त्रिक दृष्टि हैं। श्रीतन्त्रालोक में आचार्य ने इस त्रिक संदर्भ को अनेक आह्विकों में उजागर किया है। इस त्रिक दर्शन को षड़र्ध दर्शन भी कहते है। इसी त्रिकदृष्टि से वैयाकरणों का एकवचन, द्विवचन, और बहुवचन, अथवा अन्यपुरुष, मध्यमपुरुष और उत्तमपुरुष प्रभावित है। त्रिस्वर (ह्रस्व, दीर्ध और प्लुत) त्रयी (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद) त्रिवर्ग (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) त्रिलोक (भूः भुवः स्वः या परा, परापरा, अपरा) त्रिनेत्र (दक्षिण, वाम, ललाटस्थ) त्रयीहुतभुजा (तीन अग्नि गार्हस्थ्य, हवन, श्मशान) त्रिशक्ति (इच्छा, ज्ञान, क्रिया) त्रिपदी (गायत्री, जालंधर, कामरूप) त्रिब्रह्म (नर, शक्ति, शिव आथवा इड़ा पिंगला, सुष्मना) ये सब या और भी जो कोई पदार्थ तीन प्रकार से नियम में बांधा गया है वह इसी त्रिकदृष्टि के ही पोषक है। इसीलिए इस त्रिकदृष्टि के समर्थक आचार्य अभिवनगुप्त को प्रत्यभिज्ञावादी मानना युक्तिसंगत ही है। श्री मधुराजयोगिन जो इनके समीपस्थ शिष्य थे, इनकी सर्वाधिक महत्तता से प्रभावित होकर इन्हें श्रीकण्ठ के

साक्षात् अवतार और दक्षिणमूर्ति का प्रत्यक्ष स्वरूप मानते थे। यह सर्वविदित है कि हमारे सद्गुरु महाराज ईश्वर स्वरूप श्री लक्ष्मणजू बीसवीं सदी के अभिनवगुप्त थे, जिनका प्रमाण हमें बीसों बार प्रत्यक्षरूप से मिला है। सद्गुरुनामावली में भी इस तथ्य का चित्रण 'अभिनवगुप्तायकाश्मीरिकाय' के अंकन से स्पष्ट रूप से हुआ है।

कश्मीर शैवदर्शन और उस के कुछेक महान् विभूतियों का चित्रण करने के पश्चात् अब हम इस दर्शन की उपादेयता पर एक विंहगम दृष्टि डालने का प्रयास करेंगें। कश्मीर शैवदर्शन संसार में रहकर सांसारिक भोगों से या ऐश्वर्यो से परे रहकर मोक्षसाधना का उपदेश नहीं देते है। पर इस दर्शन के अनुसार मुक्ति और भुक्ति एक दूसरे के पूरक है। भोगों का आनंद लेने में ही मुक्ति का पथ प्रशस्त होता है।

मोक्ष के विषय में आचार्य अभिनवगुप्त कहते है कि –

मोक्षोहि नाम नैवान्यः स्वरूपप्रथनं हिसः।
स्वरूप चात्मनः संवित् नान्यत्।।

अर्थात् मोक्ष कोई आश्चर्यकारी असंभावित वस्तु नही है। मोक्ष तो अपने स्वरूप का विस्तार है और वह स्वरूप अपनी संवित् (Supreme consciousness) है और कुछ नहीं। इसी प्रसंग में आचार्य ने एक और स्थान पर कहा है कि –

मोक्षस्य नैव किंचित् धामास्ति न चापिगमनमन्यत्र।
अज्ञान ग्रन्थिभिदा स्वशक्त्यमिव्यक्तता मोक्षः।।

अर्थात् मोक्ष का कोई निश्चित स्थान नहीं है न ही मोक्ष प्राप्ति के लिए कहीं जाना होता है। अज्ञानरूपी बन्धन काटने पर जहां अपनी स्वरूप स्वातंत्र्यशक्ति का साक्षात्कार हो जाय, वही तत्वदृष्टि से

मोक्ष है। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस दशा में साधक को ज्ञान रूप क्रिया का और क्रिया रूप ज्ञान का स्वातन्त्र्य हो वही यथार्थ मोक्ष कहलाया जायेगा अर्थात् जहां समाधि और व्युत्थान दोनों में पूर्ण स्वरूपस्वातन्त्र्य साम्राज्य प्राप्त हो जाये वही शैवदर्शन में मोक्ष कहा गया है। इसी का दूसरा नाम स्वरूप स्वातन्त्र्य दशा है। इस प्रकार जब एक साधक भोग या ऐहिक सुख साधनों में लीन रहकर भी यथार्थ तत्व की ओर अभिमुख रहे तो उसे इन सुख साधनों में भी आराध्य तत्व का ही आराधक बना दिखता है। अतः यह कश्मीर दर्शन भोगों पर प्रतिबन्ध न लगा कर मुक्ति के वास्तविक मर्म की ओर उन्मुख रहने का निर्देश देता है। इसीलिए हम यह अनुभव करते है कि शैवदर्शन के महान् आचार्य गृहस्थी होके भी परमोच्च दशा का भागी बन पडे। आचार्य उत्पलदेव गृहस्थ में रहकमर, गृहस्थ का सुखभोग कर भी शिव सायुज्य को प्राप्त कर सके। श्री सोमानंद और उन के पांच पूर्वज गृहस्थी थे। स्मरण रहे कि आचार्य उत्पल देव उनके ही पुत्र थे। भट्टकल्लट पूर्ण गृहस्थी थे, नरसिंह गुप्त जो अभिनव गुप्त के पिता थे, पूर्ण गृहस्थी थेम। इस प्रकार इन मूर्धन्य आचार्यों ने यह स्पष्ट किया कि केवल वैराग्य या सन्यास से वास्तविकता का ज्ञान नही हो सकता अपितु गृहस्थ में रहका सुख भोग से वंचित न होने के साथ साथ स्वात्मलाभ से लाभान्वित होने के लिए कमर कसकर अभ्यास करना है। इसीलिए इन्द्रिय संयम आदि यम नियम जो भारत में बहुचर्चित रहे वे कश्मीर के सिद्धों में उतना आदर न पा सकें।

कश्मीर शैवदर्शन की आधुनिक युग के लिए उपादेयता इसलिए भी हैं क्योंकि यह जिस पथ पर चलने के लिए सारे साधकों को प्रेरित करता है वह पथ कोई विशेष मार्ग न होकर अपने ही शरीर को सत्ता देने वालाश्वासोच्छास का मार्ग है। सांस लेने की और सांस छोडने की प्रक्रिया में सावधानता बरतना ही परम लक्ष्य का मार्ग

है। प्राण और अपान इस दशा में अत्यन्त सूक्ष्म हो जाते हैं जिससे इनकी गति का कुछ भी पता नहीं चलता कि उसे प्राणा पान का संचार होता है कि नहीं। इसी प्राणसंचार साध को सन्धिस्थान (Junction of the two or meeting point of the two) पर सजग रहना चाहिए। इन्ही दो सन्धियों पर बार बार अनुसन्धानपरता से साधक स्वरूप साक्षात्कार को पा लेता है। इस प्राणसंचार में हंस हंस मन्त्र का जप दिन रात २६६०० बार स्वतः चलता है। क्योंकि "स" की ध्वनि प्राण वायु के हृदय द्वादशांत से बाहिर निकलते समय और "ह" की ध्वनि अपानवायु के बाह्य द्वादशांत से हृदय ध ाम तक जाते समय, निकलती है। इस प्रकार यह हंस से परिवर्तित हुआ स, ह का अजपाजप अनथक रूप से चलता रहता है। इस कार्य को सिद्ध करने के लिए साधारण व्यक्ति को कोई विशेष तैयारी करनी नही पडती है ना ही किसी व्यक्ति विशेष की सहायता ही लेनी पडती है। इसी के फलनस्वरूप थोडे ही समय के अभ्यास से साधक को प्रसणसंचार का धीरे धीरे चढ़ाने और उतारने का अभ्यास स्वाभाविक बन जाता है और दिन रात फिर ऐसा करने से उसे अपने स्वरूप का साक्षात्कार होता है और स्वात्मस्थिति से किसी भी अवस्था में वंचित नहीं रहता। इस प्रकार बिना किसी आभ्यास के बिना किसी विशेष उपक्रम के साधक की साध पूर्ण होती है।

कश्मीर शैवदर्शन कोई विशेष धर्म न होकर एक ऐसा साधन है जोसर्वजनसाध्य है। यह किसी विशेष सम्प्रदाय के लिए नहीं बना है, विशेष वर्ण, धर्म, जाति और देश के लिए इसकी उपादेयता न होकर संसार के प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह ग्राह्य है। वास्तविक रूप से समझा हुआ यह दर्शन आधुनिक विचारकों की चिन्तनधारा को नई दिशा प्रदान करने में सक्षम है। एकत्व में जगदूपता और परिवर्तनशीलता में नित्यता के तत्व को देखना ही इस दर्शन का

प्रयास है। यद्यपि भारत जैसा चिन्तनप्रधान देश सिद्धों, ऋषियों, संतों और योगियों के लिए, उर्वराभूमि खण्ड के रूप में सदियों से रहा है पर इस कश्मीर दर्शन की महत्ता और ओजस्विता ने इस ध ारा कोऔर भी महनीय बनाया। आजकल के संघर्ष पूर्ण जीवन के लिए कश्मीर शैवदर्शन का यह संदेश समयानुकूल है कि उस परम सत्य को पाने के लिए हमें अनेक प्रकार की यातनाओं को झेलने की कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि पाना हमने कुछ भी नहीं। यह पहले से ही हमने पाया है। यह संवित रूप से विश्व के कण कण में व्याप्त है। इसे सिद्ध करने के लिए हमें प्रमाणान्तरों की कोई आवश्यकता नहीं संसार का कर्त्ता स्वतंत्र है वह "कतुं अकर्तुं अन्यथाकर्तुं समर्थः" अर्थात् वह बनाने में, बिगाडने में या अन्य उलट फेर करने में पूरी तरह से समर्थ है। वह किसी की सहायता पर निभर्र नही है। संस्कृत भाषा के व्याकरणकार श्री पाणिनि ने कर्ता की परिभाषा देते हुए कहा है कि "स्वतंत्रः कर्ता" अर्थात् कर्ता वह होता है जो स्वतंत्र हो परमुखापेक्षी न हो। कर्ता की यह परिभाषा कश्मीर शैवदर्शन की परमसत्यता का पूर्व रूप से दिग्दर्शन करती है। स्वातन्त्र्यवाद इस दर्शन का प्राण है। हमारे सद्गुरु महाराज ईश्वरस्वरूप स्वामी लक्ष्मणजू कहा करते थे कि पाणिनि परिपूर्ण रूप से शैवी थे, क्योंकि उन्होंने चौदह सूत्रों में से "अदडण्" सूत्र पहले लिखकर यह सिद्ध किया कि अ यह पहला स्वर ही सभी भाषाओं का आदि वर्ण है। यही अनुतर है अर्थात् जिसका कोई सानी नही है। यही वेदों और आगमों का सार प्रणव का प्रथम अक्षर है। मातृकाचक्र का भी यही आदि वर्ण है। इस अनुतर को हमें कही ढूंढ़ने के लिए नहीं जाना है। यह तो हममें सर्वदा सर्वशः व्याप्त है। केवल अनुरांधानपरायणता की आवश्यकता है। यह अनुसंधान न कोई चिन्तन है, न कोई अनुशासन है और न कोई स्वभाव है। इस अनुसंधान का अभ्यास नहीं किया जाता क्योंकि

यह क्षण क्षण प्राप्त किया जाने वाला जागरण है। इस विषय में कहा गया है कि –

अय रसः येन मनागवाप्तः
समाधि चेष्टा निरतस्य तस्य।
समाधि योग व्रत मंत्र मुद्रा
जपादि चर्या विषवत् विभाति।

अर्थात् इस अनुसंधान परायणता की रसानुभूति जिसे जरा भी हुई, स्वतंत्र चेष्टा में निरत बने हुए उस साध को, समाधिधारण, योग सेवन, व्रतपालन, मंत्र उच्चार, मुद्रा ज्ञान, जप आदि क्रिया विष–तुल्य दिखती है। अर्थात् उसे इन बाह्य क्रियाओं में तनिक भी आनन्द नही आता है। ऐसा साधक फिर बाहरी पुष्प आदि सामग्री को एकत्रित करके पूजा करने नही बैठता। स्वतंत्र निर्मलस्वरूप चिदात्मा भैरव के साथ जहां भेद प्रथा रूप पदार्थ – समूह की एकता की जाती है, वही वास्तव में उसकी यथार्थ पूजा है। ऐसे साधक के लिए बाहरी स्नान शुद्धि आदि करने की भी कोई आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि नित्य शुद्ध संवित् पर बाहिर से पानी के घड़ों के उड़ेलने से क्या हो सकता है। यदि इन बाहरी स्नानों आदि से पवित्रता आ सकती है तो "यदि मुक्तिः जल स्नानात् मत्स्यानां सा न किं भवेत्" अर्थात् यदि जल स्नान से मुक्ति होती तो मछली आदि जल जन्तुओं की मुक्ति क्यों नहीं होती जो रात दिन पानी में ही वास करती है और पानी ही जिन का जीवन है। इस प्रकार यह दर्शन वर्तमान प्राणियों को सावधान करता है कि ब्राह्म पूजा आदि पर बल ने देकर आभ्यन्तर तत्व के परिशीलन में ही निम्न्न रहो।

भौतिक आकर्षणों से व्यस्त और व्याकुल बने हुए जीवों को, कश्मीर शैवदर्शन, इन प्रेरणाप्रद शब्दों से संचेत करते हुए समझाता है :

संसारोस्ति न तत्त्वतस्तनुभृतां बन्धस्यवार्तैव का बन्धों यस्य न जातु तस्य वितथा मुक्तस्य मुक्ति क्रिया। मिथ्यामोहकृदेष रज्जुभुजगच्छाया पिशाचभ्रमो मा किंचित् त्यज मा गृहाण विलस स्वस्थो यथावस्थितः।

अर्थात् सारे शास्त्र संसार को असत्य कहते है, जब संसार तात्त्विक दृष्टि से है नहीं, तो बन्धन काहे का? जिसका बन्धन ही असिद्ध है उसकी मुक्ति की बात करना बेकार है अर्थात् जीवन तो मुक्तात्मा है उसे मुक्त बनाने के उपायों में लगाना काहे की अकलमन्दी है? सही रूप में यदि देखा जाये तो बन्धन या मुक्त आदि की भावना व्यर्थ के मोह द्वारा पैदा की गई है। यह रस्सी पर सांप की भ्रान्ति या छाया में भूत के भय के समान आभास मात्र है। इसलिए सबके लिये एक ही राजमार्ग है जिस पर चलकर आधुनिक युग के तनाव पूर्ण जीवन में सारे संसार के लोग कल्याण को प्राप्त कर सकते है। वह राजमार्ग है कि सर्वत्र परमशिव की व्याप्ति के आधार पर संसार में किसी पदार्थ के त्याग की बात या किसी में ग्रहण की असक्ति नहीं होनी चाहिए। स्वात्मभाव में जिस रूप में हो, रहो और सदा स्वात्मशिवत्व का अनुसंधान कर प्रफुल्लित रहो। आधुनिक युग के योगी स्र्वगीय जे.कृष्णमूर्ति ने अपनी पुस्तक "The first and last freedom" में कहा है कि उन्होंने "मां किंचित् त्यज मां गृहाण" इसी मंत्र की साधना की उन्होंने इस भाव को "Choiceless awareness or an awareness which is not of thought" कहा है। इस प्रकार (Taoism) के "Non-interference" भाव में और Zen के "Let go" भाव में और जे.कृष्णमूर्ति के "Choiceless awareness" में हमारे शैवदर्शन के शांभवोपाय की ही झलक मिलती है। आधुनिक युग में शैवदर्शन की उपादेयता क्यों अन्य दर्शनों से महत्व पूर्ण है इस सत्य पर चर्चा करते हुए शैव दर्शन ने हमें 'हेयोपादेय विज्ञान' का सिद्धान्त सामने रखा है। यह 'हेय' है अर्थात् इसका

त्याग करना चाहिए यह 'उपोदय' है इसको ग्रहण करना चाहिए। ये दोनों विचार भेदवाद पर आधारित है हमें न किसी को हेय या त्याज्य मान कर उसका त्याग करना चाहिए और न उपादेय या ग्राह्म समझ कर उसका ग्रहण करना चाहिए। हमें इन दोनों से निरपेक्ष होकर, तटस्थ होके निर्विकल्प में लीन होने का अभ्यास करना चाहिए। अपनी बुद्धि को वैचारिक संक्रमण का शिकार बनने नहीं देना चाहिए, भेद जन्मदाता मुख शरीर या चरण आदि का अथवा किसी ऐसी घटना का ध्यान ही नहीं करना चाहिए तथा किसी धारणा के बन्धन में या भावना के प्रवाह में बहना नही चाहिए।

कितना सर्वसमयोपयोगी और सर्वजन ग्राह्यमौलिक उपदेश है यह आचार्य अभिनवगुप्तपाद का।

भारत के मान्य अन्य दर्शनों में निष्काम कर्मयोग के विषय में जो धारणा है कश्मीर शैवदर्शन उसके पक्ष में नहीं। इस दर्शन के अनुसार कर्मयोग का तात्पर्य है Yoga in action यह क्रिया योग ही उच्चयोग है। योग की विशेषता एकाग्रता या अनुसन्धानपरायणता में है जिसे अपनी वैयक्तिक सत्ता में अथवा परावाक् में एकाग्रता, मध्यमावाक् में एकाग्रता की विवृद्धि और वैरवरी वाक् में भी एकाग्रता का समुन्नयन है। इस क्रिया योग को समझाते हुए हमारे सद्गुरु महाराज श्रीलक्ष्मणजू कहा करते थे कि जब हम बस में बैठे सफर करते है या जब हम सड़क पर चलते है हमें मौन रखना चाहिए, गुपचाप सड़क पर चलना चाहिए या चुपचाप बस में सफर करपा चाहिए। किसी के साथ सम्भाषण में न लगकर, केवल अपने अभ्यास में लीन रहना चाहिए। यह क्रिया योग बहुत ही शक्तिशाली है। मानिये आपने इस प्रकार का अभ्यास पन्द्रह मिन्ट के लिए किया हो तो इसका फल आको अपने साधनाकक्ष में नियत रूप से एक साल तक अभ्यास करने से प्राप्त होगा। क्योंकि इस प्रकार का

अभ्यास आपकी साधना विधि को और अधिक सुदृढ़ और ठोस बनाने में समर्थ होता है। प्रातः कालिक भ्रमण के पश्चात् जब आप अपने साधना कक्ष की ओर लौटोगे तो वहां स्वतः सिद्ध ही आप ोग की परादशा मेमं प्रवेश पावोगे बशर्ते कि आपकी साधना इस क्रिया योग में स्वयं सिद्ध और व्यवच्छेद रहित हो। अन्यथा उपरोक्त साध ाना सफल नहीं होगी। जब हम क्रिया योग का वैरवरी वाक् में होने का दर्शन करते है तो इसमें हमें बातें करने में हंसने में और अन्य सारी दैनिक क्रियायों में स्वरूपस्थिति का आभास होता है। इस प्रकार का क्रिया योग तब तक संभव नहीं जब तक कि वैरवरी वाक् से पूर्व की दो दशाओं का रसास्वादन न किया हो। इस स्थिति का क्रिया योग कलाविद् साधकों मको ऊंचे शिखर तक पहुंचाता है।

कश्मीर शैव दर्शन की व्यावहारिकता पर जब हम दृष्टिपात करते है तो यह स्पष्ट होता है कि इस दर्शन के अनुत्तर मार्ग में पूजा, पूजक तथा पूज्य, अथवा स्तोता, स्तोत्र व स्तुत्य रूप भेदमार्ग का तिरस्कार कर इन तीनों के समन्वय में स्थितप्रज्ञ रहना चाहिये। यह बात ही नहीं है कि इस मार्ग में किसने क्यों और कैसे प्रवेश करना है या कैसे छूटना है। यदि हम यह कहें कि यह माया है तो वह माया भी अद्वैत चितृप्रकाश के बिना या उससे अलग होकर ठहर ही नही सकती। ये सारे उपाय निर्मल स्वात्म अनुभव रूप ही है फिर व्यर्थ में हमें किलिए चिन्ता करनी है। स्नेह वैर, सृष्टि विनाश, हर्ष या विषाद आदि भाव स्वात्मरूप जगत् से भिन्न नहीं, अपितु ये उसके ही स्वभाव है। जिस रूप या जिस भाव को देखकर आप उसके साथ लीन होते है उसे संवित् स्वरूप ही जानों और उसी भावना से सारे व्यवहार करो। हमें अद्वैत भावना से संसार के सभी पदार्थों के साथ सम्बन्ध जोड़ना चाहिए जिससे हम उसी रंग में रंग जायेगें। इसी साधक को इस दर्शन में "परजीवैक्यधर्मज्ञः" कहते है।

कश्मीर शैव दर्शन की यह मान्यता है कि हमारे संवित् दर्पण से ही

जगत् सम्बन्धी सारी धारणाओं की उत्पति होती है। हमारे चित् दर्पण से अलग इनकी सत्ता ही नहीं है। अहं परामर्श की सुदृढ़ता के स्वरूप आनन्दातिरेक का प्रादुर्भाव होने से देहाभास तथा उससे सम्बद्ध अन्य संकल्प विकल्प परम्परा का विलय होता है और "प्रसरतिपरमानन्दः" का उदय होता है। जैसे नमक की डली को जिस और चाटेंगे उस ओर नमक के स्वाद के अतिरिक्त कुछ नहीं होगा इसी तरह से उपरोक्त अवस्था में भी आनन्द के बिना अनुभूति किसी की नहीं होती है। आचार्य उत्पलदेव के अनुसार इसी आनन्दावस्था में –

न सदा न तदा न चैकदे
त्यपि सा यत्रा न कालधीर्मवेत।
तदिदं भवदीय दर्शनं
नच नित्य नच कथ्यतेऽन्यथा।।

अर्थात् सदा तदा, एकदा आदि काल कलना का ज्ञान इस अवस्था में नहीं रहता है।

कश्मीर शैव दर्शन के अनुसार परमशिव पंच कृत्यकारी माने जाते है। ये पांचकृत्य (Acts) है – सृष्टि, स्थिति, संहार, पिधान या तिरोधान, अनुग्रह। सृष्टि शब्द की व्युत्पति सृज् धातु से हुई है, जिसका अर्थ उत्पन्न करना या निर्माण करना नही है।, जैसा कि सामान्य अर्थ किया जाता है, अपितु इस दर्शन में सृज् का अर्थ अपने से बाहर निकालना है। निर्माण करने की अवस्था में बाहरी साधनों की अपेक्षा के बिना वह अपने ही स्थित विश्व का अपने से बाहर निकाल कर इस स्थिति का आनन्द लूटता है अतः सृज् धातु का अर्थ है **"To emanate"** इसी प्रकार संहार का अर्थ भी **"destruction"** न होकर यह है कि जो संसार परमशिव ने अपने से बाहर निकाला, उसी को पुनः अपने में समेटने का नाम संहार है।

कहा भी है "World is not a creation but an emanation" संहार is not destruction but it is reabsorption" स्थिति परमशिव का रक्षात्मक और पिधान स्वरूपगोपनात्मक और अनुग्रह स्वरूप प्रथनात्मक कृ१त्य है। ये पंच कृत्य परमशिव के कर्म है। ये क्रिया नहीं। क्योंकि क्रिया परमुखापेक्षी होती है जब कि कर्म नहीं। परमशिव स्वतंत्र है उसे किसी दूसरे की अपेक्षा नहीं रहती जबकि एक साधारण व्यक्ति (Individual) अस्वतन्त्र है, उसकी प्रत्येक क्रिया दूसरे पर निर्भर रहती है। इस पंचकृत्य के विषय में शैव दशैन की मान्यता है कि सृष्टि स्थिति संहार, पिधान और अनुग्रहात्मक पांच कर्म परमशिव करके विश्व को पुनः प्रकाशित करने के लिए अनुग्रहात्मक कर्म करते है। इसयी से विश्व की सत्ता प्राप्त होती है। स्मरण रहे कि परमशिव के कार्य कलाप को "कृत्य" की श्रेणी में रखा जाता है जबकि व्यक्ति के कार्यों को क्रिया की श्रेणी में रखा जाता है यही अन्तर है कृत्य और क्रिया में।

हमारे कश्मीर शैव दर्शन ओर वेदान्त दर्शन में कुछेक असमानतायें जो दृष्टिगोचर होती है वे साधारण होकर भी असाधारण सी लगती है। वेदान्तियों की धारणा है कि जीवत्मा की अभिव्यक्ति तभी होती है जबकि विश्वात्मा का प्रतिबिम्ब जीवात्मा की बुद्धि में पडता है। शैवदर्शन वादियों का कहना है कि यह धारणा भ्रान्त है क्योंकि विश्वात्मा तो पूरी तरह स्वच्छ शुद्ध और पूर्ण है और जीवात्मा मलों से तथा आवरणों से आवृत है बुद्धि में इतनी गहराई कहा कि वह विश्वात्मा का प्रतिबिम्ब धारण कर सके, यह तो विश्वात्मा ही है जो बुद्धि के प्रतिबिम्ब को ग्रहण कर सकता है। क्योंकि अधिक प्रकाश पुंज की अपूर्ण प्रकाश को अपने मे लीन कर सकता है। कश्मीर शैव दर्शन के अनुसार जब परमशिव अपनी स्फुट इच्छा से अपने स्वातन्त्र्य दर्पण में प्रतिबिम्बित होते है तो इसी के परिणाम स्वरूप जगत् औरजीव का अस्तित्व उभर पड़ता है।

"ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या" कहकर इस दर्शन के वादी ब्रह्म को सत्य मानते है औरसंसार को मिथ्या पर शैव दर्शन वादी कहते है कि यह ठीक है कि ब्रह्म या परमशिव सत्य है पर हम यह कैसे कह सकते है कि जिस जगत की उत्पत्ति उनसे होती है वह जगत् मिथ्या है असत्स्वच्प है। क्योंकि जैसा कारण होगा वैसा ही कार्य भी होगा। अतः यदि हम जगत को मिथ्या माने तो शैव दर्शन की यह धारणा कैसे सत्य होगी कि सृष्टि सत्य स्वरूप और ठोस है क्योंकि शैवी धारणा के अनुसार जगत में ऐसा कुछ नहीं जो असत्य है यहा तक कि घास का तिनका भी संवित् स्वरूप ही है।

कई प्रामाणिक दर्शनों में कुण्डलिनी योग को अवरयोग साधना में लगे हुए साधकों की अभीष्ट वस्तु माना है पर कश्मीर शैव दर्शन के अनुसार कुण्डलिनी योग महत्त्वपूर्ण यौगिक प्रक्रिया है जिसमें पसकुण्डलिनी योग सर्वोच्च है और शिवसायुज्यदायक है चितकुण्डलिनीयोग चेतना से सम्बद्ध है, और प्राणकुण्डलिनीयोग प्राणापान से जुड़ा है। कश्मीर शैव दर्शन की आधुनिकयुग में सबसे बडी विशेषता यह है कि यह अन्य दर्शनों की तरह सीमित वर्ग के लिए या केवल ब्राह्मणों के लिए या केवल श्रोत्रियनिष्ठों के लिए ही ग्राह्य नही है अपितु अन्य वर्गो के लिए विशेष वर्ग जाति आकार या वर्ग के लिए कोई विशेश आग्रह नहीं अपितु सर्वधर्मो के लिए इस पुस्तक का पन्ना खुला है। अन्य धर्मों में नारी के लिए जो प्रतिबन्ध रखे हुए है वे प्रतिबन्ध इस दर्शन में नही है। समस्त नर वर्ग के साथ समस्त नारी जाति भी स्वरूप साक्षात्कार के क्षेत्र में उतनी ही वांछनीय है जितना कि नरसमुदाय। आचार्य अभिनव गुप्त ने यहां तक कहा है कि साधना के क्षेत्र में नारी नर से कई गुणा अधिक थोडे से समय में ही सिद्धि प्राप्त कर सकती है। उनके ही शब्दों में –

योक्ता: संवत्सरात्सिद्धि
रिहं पुंसामभयात्मनाम्।
सा सिद्धिस्तत्त्वनिष्टानां
स्त्रीणां द्वादशभिर्दिनैः।।

अर्थात् एक वर्ष में जिस सिद्धि को नस्वर्ग प्राप्त करता है। उसी सिद्धि को तत्वनिष्ठ स्त्रियां बारह दिनों में ही प्राप्त करती है। अत एव दूती का साथ इस सम्प्रदाय में महत्त्व रखता है। अनुसन्ध ानपरायणता और एकाग्रता के लिए स्त्रियां प्रसिद्ध है। यह अनुसंध ान परायणता (Self Awareness) ही प्रत्यवमर्श (Consciousness) की आत्मा है। यही स्वतः उदित परावाक् है और परमशिव का स्वातन्त्र है। यही स्फुरता है, यही महासत्ता है जो देश का आकार आदि के घेरे से अनतिकान्त है। आचार्य उत्पलदे ने ईश्वर प्रत्यभिज्ञा में इस अनुसन्धानपरायणता अथवा चिति के विषय में कहा है कि–

चितिः प्रत्यवमर्शात्मा परावाक् स्वरसोदिता।
स्वातन्त्रयमेतन्मुख्य तदैश्वर्य परमात्मनः।। इत्यादि।

प्रकाश और विमर्श का सिद्धान्त शैव दर्शन का उपयोगी सिद्धान्त है। कहा है कि –

प्रकाशतामात्रां शिवस्यैव निजंवपुः।
प्रकाशः केवल शिवः।। तन्त्रालोक।
प्रकाशवपुरेवायं भासते परमेश्वरः।। तल्त्रालोक।।
प्रकाशो नाम यश्चायं सर्वत्रौव प्रकाशते।
अनपह्वनीयत्वात् किं तस्मिन्मानकल्पनैः।।

अर्थात् प्रकाशताही शिव का अपना शरीर है। उसके अतिरिक्त किसी अन्य पदार्थ की सत्ता हो नहीं सकती वाह्य या आन्तर वस्तुवर्ग सारा प्रकाशतामात्र है।

यह भेदभाव तथा अद्वैतवाद सब प्रकाशमान होने के कारण प्रकाश शरीर परमेश्वर है।

प्रकाश नाम से जो कुछ है वह शाश्वत प्रकाशमान है वहां आदि वर्तमान अनजाने अर्थ का प्रकाशन अथवा विषय का अज्ञान आदि अनुभव की बातें नही है।

क्योंकि वह अनुभव भी प्रकाश रूप ही है। यह निरन्तर भासमान है। यह आदि सिद्ध है। इसे छिपाया नहीं जा सकता। इसमें प्रमाण कल्पना बेकार है। वही प्रकाशही प्रकाशक प्रभाता भी है – परमेश्वर शिव है। शिव का एक ही स्वभावभूत धर्म अहं प्रत्यवमर्श है। उपायों के द्वारा शिव का भान नही होता। उपाय तो स्वयं उनकी कृपा पूर्ण प्रसन्नता से मासित होते है। कहा है कि –

उपायजालं न प्रकाशयेत् शिवं
घटने कि भांति सहस्त्रदीधिति।।

प्रकाश का यह चमत्कार ही है कि न रहने पर मासित होना पर वास्तव में कुछ न होना है। इसी तरह शक्तिमान और शक्ति की भेदात्मक स्थिति का भी गोपन नहीं होता है भेदभाव भ्रासमानता के स्तर तक तो वास्तविक है पर अभेदसत्त विकारहीन है।

विमर्श - तस्य देवातिदेवत्त्य परबोधस्वरूपणि:।
विमर्श: परमाशक्ति: सर्वज्ञ ज्ञानशलिनी।।

उस परमज्ञानस्वरूप देवाधिदेव की सर्वज्ञ ज्ञानशलिनी महान्शक्ति ही विमर्शशक्ति है यह विमर्श ही परमशिव का सार सर्वस्व हृदय और उसमें प्रवेश पाने का द्वार है। मयूराण्डरसक्त अर्थात् जैसे मोर के अण्डे के रस में विचित्र रंगों और आकारों सहित मोर रहते है वैसे ही यह समस्त संसार परमाप्रकाशमय शिव की इस विमर्श शक्ति में रहता है। इस विमर्श पर ही संसार की सृष्टि स्थिति और

संहार निर्भर है। विमर्श ही अहं चेतना है। शैवागमों में यही विमर्श शक्ति जगत् है जिसकी उद्‌भावना ३६ तत्त्वों द्वारा दिखाई गई है। आग में दाहिका शक्ति की तरह सूरज में गरमी की तरह जल में शीतलता की तरह प्रकाश और विमर्श एक दूसरे के साथ मिलें हैं।

अन्त में हम कह सकतें है कि कश्मीर की महीयसी मही से महनीया मुक्ति की धारा भारत पर बहुत समय के लिए बरसती रही और साधकों और विद्वानों के हृदय को अभिभूत कर बैठी क्योंकि आचार्य अभिनवगुप्त के अनुसार स्वात्म प्रत्यय के लिए शास्त्रों का गहन अध्ययन और उनका अनुशीलन सहायक होता है ओर स्वात्मविकास का संवर्धन करता है तथा संवित का उदयहोता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हुआ कि कश्मीर शैवमत केवल आध्यात्मिक प्रणाली न रह कर एक व्यापक जीवनदर्शन के रूप में विकसित हुआ तथा इसमें समूचे बुद्दिजीवी चिन्तन को प्रभावित किया।

जय गूरुदेव।

शास्त्री जी के अन्तिम शब्द

"मुझे पूरा विश्वास है कि मैं ने अगले जन्म में भी कश्मीरी पण्डितों की सेवा करनी है।"

22-08-1999

कश्मीरी पण्डितों की दशा और दिशा

शिभनजी खैभरी

हमारे विस्थापन के 27 वर्ष बीत गए और जाहिर है कि इतने वर्षो का एक लेखा झोखा प्रेषित किया जाए। हम एक कम्युन्युटी (Community) के स्वरूप में कहां खड़े है, हमारा भविष्य क्या है, हमारी जन्मभूमि संग हमारा वास्तविक परिपेक्ष क्या है। विषम परस्थितियों और उत्पीडन के शिकार, हम कश्मीर के मूल निवासियों ने, अपना अस्तित्व कैसे बनाए रखा और अपनी सांस्कृतिक धरोहर की हमने कैसे रक्षा की और यदि, उस में कुछ परिवर्तन या कुछ विलयन दिखता है, क्या वह निर्वासन के कारण अथवा अन्य कारणों से इन प्रश्नों से हमें झूझना तो पड़ेगा। साथ ही 1990 की अभूतपूर्व त्रासदी से हम ने क्या सीख ली। हमारे प्रति सरकारों की अनुभूतिहीनता या उदासीनता की बातें भी हों। मेरे मतानुसार कश्मीरी पंडितों की दशा और दिशा विषय बिल्कुल ठीक चुना गया है और जिसपर मुझे आलेख पढ़ने को कहा गया है। चुंत्कि एक साधारण स्तंभकार के नाते में प्रायः राजनैतिक विषयों पर लिखता रहता हूँ अथवा टीवी डिबेटस में भी राजनैतिक विषयों पर ही प्रायः एक पंडित की हसीयत से भाग लेता हूँ, मेरे लिए इस विषय पर बोलना एक कठिन प्रश्न को हल करने की बात जैसी है, प्रयास करूंगा।

सवाल है कि व्यक्तिगत स्तर पर हमारे समुदाय ने जीने की तथा अपनी धरिता के अनुसार आगे बढ़ने की प्रक्रिया ने सामूहिक रूप में क्या तस्वीर पेश की है। व्यक्तिवाद ने सामूहिकता को पीछे तो नहीं धकेला है ? हमारा समुदाय एक संयुक्त, एकत्र रूप में अपने आप को प्रक्षेपित करने में अपना सार्मथ्य जुटाने में कहीं चूक तो नहीं कर गया ? निर्वासन में असीम कठिनाइयों को झेलते हुए हमारे बच्चों ने जिस प्रकार अपनी पढ़ाई लिखाई पर सारा ध्यान

केन्द्रित किया वह सरहानीय है। यह समझ लिया कि परीक्षाओं में श्रेष्ठता या काबलियत ही उनके लिए सब कुछ है क्योंकि उनके लिए आरक्षण जैसे प्रावधान नहीं है। यद्यपि वह जलाए वतनी के कारण कठिनतम परिस्थितियों के शिकार हैं इस तथ्य से भी विचलित नहीं हुए कि काबलियत के बावजूद जम्मू कश्मीर राज्य में उनके लिए रोजी रोटी के सारे अवसर बंद है। फलस्वरूप अपने माता पिता को छोडकर दूर दूर प्रदेशों में निजी क्षेत्र में अपना भग्य आजमाते रहे हैं जो पिछले दो वर्षो से जारी है। जम्मू और आस पास के इलाकों में जहां 1990 के विस्थापित कश्मीरी पंडितों ने आश्रय लिया, उन परिवारों में प्रायः अब बूढे मां बाप ही रहते है और जीवन की सन्ध्या में अपने बच्चों के साथ रहने के सुख से वंचित हैं।

निजी क्षेत्र की अपनी सीमाओं और मजबूरियों के कारण, जहां लाभ तथा वार्षिक बिक्री में निरंतर बढौतरी उनका ध्येय रहता है, प्रायः अपने कर्मचारियों को बहुत कम छुटिटयां देते है जिस कारण दिवंगत माता अथवा पिता के परमपरागत 12 दिनों के शोक तथा दूसरी धार्मिक रीतियों में वे सम्मलित नहीं हो पा रहे हैं, ऐसा बहुत सारे मामुलों में देखा जा रहा है।

हमारी दशा का एक और पहलू यह है कि 1990 तक कश्मीर में कहीं भी यह सुनने में नहीं आता था कि कश्मीरी पंडित घराने में किसी और जाति, संप्रदाय या प्रान्त में रिश्ते बनाएं गए, पर अब दशा यह है कि 40 प्रतिशत की दर से कश्मीरी पंडित बेटियां एवं बेटे अपने समुदाय से बाहर रिश्ते बनाते हैं जिस से हमारे समुदाय में सांस्कृतिक तथा पारम्परिक समीकरणों पर निरतंर प्रहार हो रहे है। वह हमारे बुद्धिजीवी और समाजी कार्यकर्त्ता, जो कलचर को बचाने की निरतंर दुहाई देते रहते है, इस अवांछित बदलाव की उपेक्षा करते हैं या कुछ करने की इच्छा शक्ति के बावजूद भी कुछ कर नहीं पाते। परिस्थिति गंभीर है।

यज्ञ की समाप्ति पर अरवनूर जम्मू में चन्द्र भागा के तट पर कलश प्रवाह का दृश्य

इसका दूसरा भयावह रूप यह है कि प्रजनन आयु के जोडे एक तो देर से विवाह के सूत्र में बन्धते है और दूसरे संतान उत्पति को लेट स्थगित करते हैं और तीसरे, एक संतान से अधिक नहीं रखते। एक और हमारे समुदाय का मरन दर बढ रहा है वही जन्म दर में निरन्तर कमी आने से संचयी वृद्धि या कमुलेटिव ग्रोअथ बुरी तरह प्रभावित हो रहा है। यह कोई अतिशियोक्ति नहीं होगी कि आने वाले 20वर्षो में हामरी जन संख्या करीब करीब आधी तक सिमट जाएगी और 50 वर्षो में स्थिति और भी भयानक रूप धारण कर सकती है।

प्रश्न यह है कि जिस समस्या का हमारे पास उसका समाधान है हम उस में क्यों अपनी विवशता दिखाते है। यह एक गंभीर समस्या है।

भाषा की बात करें, इस में कोई संदेह नहीं कि भाषा किसी संस्कृति व किसी समुदाय की पहचान होती है, भाषा वर्तमान, अतीत और भविष्य को जोडने का काम करती है एक श्रंखलाबंधन का रोल निभाती है। हम अपने इतिहास को, अपनी भूमि को, अपने साहित्य को भाषा के माध्यम से ही तो जान पाते हैं मातृ भाषा विशेष कर एक धुरी का कार्य करती है, एक बच्चे को संज्ञानात्मक बोध या सहृजता से करवाती है। मैं भारत के कई प्रदेशों में गया हू और वहां रहा भी हूं और देखा है कि वे अपनी मातृ भाषा में ही बात करते हैं और इस में गौरवान्वित होने की अनुभूति करते हैं मगर हमारी नवजवान पीडी इस बात की अत्यन्त उपेक्षा करती है, हमारे बच्चे हिन्दी अन्ग्रेजी आदि तो बोलते हैं पर कश्मीरी नहीं और खेद का विषय है कि प्राय: माता पिता उनको ऐसा करने में प्रोत्साहित करते हैं।

यहां यह कहना आवश्यक है कि देवनागरी लिपि और नसतिलक लिपि में कश्मीरी भाषा लिखी जाती है। कश्मीरी की अपनी लिपि

शारदा थी पर अब नसतिलक लिपि को ही सरकार ने मान्यता दी है और कश्मीरी पंडितों में अकसर वहीं इसका उपयोग करते हैं जो साहित्य में रूचि रखते हों और कम से कम यदि फारसी नहीं तो उूर्द का थोडा ज्ञान होना अनिवार्य है। नसतिलक लिपि और कश्मीरी पंडित दो परस्पर विरोधी तत्त्व होने चाहिए थे जैसे कश्मीरी मुसलमान लेखक औ. देव नागरी लिपि, मगर जहां कश्मीरी मुस्लमान देवनागरी लिपि में कश्मीरी नही लिखते और केवल नसतिलक में ही लिखते हैं वही सरकारी मान्यता के कारण और नसतिलक लिपि में कश्मीरी पढ़ाने के कारण लिपि कश्मीरी भाषा की लिपि बन कर रह गई है। हमारे समुदाय के विद्वान दोनों लिपियों में लिखते हैं। इन कश्मीरी पडित विद्वानों में कुछ नसतिलक इसलिए प्रयोग में लाते है कि उनकी कृतियां कलचरल अकादमी और अन्य सरकारी विभागों में पहुंच कर मान्यता प्राप्त करें अथवा सरकारी पुरस्कारों की प्राप्ति के पात्र बनें। जो भी स्थिति हो, कश्मीरी भाषा बोलने और सुनने में तो कोई परेशानी नहीं होनी चाहिए मगर अकसर घरों में कश्मीरी में बच्चों के साथ बोल चाल नहीं होती। हमारी मूल भाषा कश्मीरी, जिस से हमारी पहचान है एक समुदाय के अस्तित्व की द्योतक है, हमारी उदासीनता के कारण हम से निरंतर दूर भाग रही है।

हमारी दशा का एक और पहलू है शादी ब्याह समारोहों में निरन्तर नए आयाम, नई रीतियां व नए तरीके जोड़ना जो हमारे अतीत से मेल न खाते हैं न ही संस्कृति से इन समारोहों में लाखों का खर्चा करके निर्वासन के घावों का और विस्थापन के दर्द को उस चोट का आघात का निर्दयता से छलावरण होता है। एक और हमारे उत्पीडन के दावे और दूसरी और विवाह समारोहों पर महंगे खर्चे आपस में असंगत और अन्तर्विरोधी हैं। विस्थापन के दुःख और अपमान हम पर इतना प्रभाव तो डाल सकते थे कि हम ऐसे

आयोजन साधारण सादगी से करते ताकि हम पर यह झूठे आरोप न लगते कि विस्थापन हमारे लिए अभिशाप नहीं बल्कि वरदान सिद्ध हुआ और दूसरी ओर, हमारे समाज में वह तबका जो आर्थिक रूप में हाशिए पर है बेवजह के प्रतिस्पर्धा के चक्रव्यूह में न फंसता।

नैतिक मूल्यों को लगता हम ने प्रायः "चलता है" की भेंट चढाया है और जिस कारण आज कोर्ट कचहरियों में तलाक के सैंकडों मामले चल रहे हैं और न्यायिक निर्णयों के लिए दोनों पक्ष समय, धन, सुख व चैन की बली चढाते है। क्या पहले यह स्थिति थी ? अगर नहीं तो अब क्यों और क्या कारण है कि इन में आए दिन बढौतरी हो रही है। हमारा धार्मिक, सामाजिक सांस्कृतिक और राजनैतिक नेतृत्व इस समस्या को सुलझाने में क्या रोल अदा कर रहा है, इस का कोई उत्साहजनक परिणाम देखने, सुनने में नही आ रहा।

मगर हमारे समुदाय ने विस्थान के दर्द को कश्मीर में इस्लामी कटटर पंथ को, हमारे पर हुए अत्याचारों व हत्याकांडो की ओर, देश विदेशों की जनता व सरकारों का ध्यान आकर्षित किया और एक चेतना लाई। इस्लामी और जहादी आतंकवाद जिस की उपज, प्रसार व फैलाव का केन्द्र पाकिस्तान है, को हमारे समुदाय ने काफी हद तक बेनकाब किया। 19 जनवरी 13 जुलाई, 14 सितंबर, 27 दिसम्बर जैसे काले और भयावह दिनों की याद हम हर वर्ष ताजा करते है, स्मरणोत्सव मनाते हैं और प्रतिज्ञा लेते हैं कि जिस कश्मीर को हम से छीन लिया गया, उसे अपनी शर्तो पर पुनः वापिस लेंगे।

इतना ही नहीं, छदम धर्म निरपेक्ष तत्वों, शातिर राजनैतिक नेताओं, तथा कथित उद्धार अवसरवादी, वाम पंथी कटटरवादियों, पक्षपाती पत्रकारों, धन लोलुप लेखकों आदि जिन्होंने हमारे बदले हमारे

उत्पीडको और हिस्त्र दरिंदों का साथ दिया, को इस समुदाय ने समय समय पर बेनकाब किया।

हम ने अपने आराध्य माता राज्ञा भगवती और माता शारिका देवी जिन में हमारी भावनात्मक धार्मिक आस्था है की प्रतिकृतियां तथा मंदिर जम्मू और दूसरे स्थानों में बनवाई जो हमारी आस्था और संस्कृति को बचाए रखने के हमारे संघर्ष के द्योतक हैं और इसी प्रकार बहुत सारे संतों महात्मओं के आश्रम भी हमने बनवाए। मगर सैंकडों शहीदों के सम्मान में एक भी समार्क नहीं बनवा पाए। विस्थापन में साहित्यक गतिविधियों में अभूतपूर्व बढौतरी हुई विद्वानों ने कई पुस्तकें लिखी जो अनुवाद, इतिहास, संस्कृति, काव्य, उपन्यास, आध्यात्म, रहस्यवादी मूर्तियां जैसे माता लल्लेश्वरी आदि के बारें मे। धार्मिक कश्मीरी भजन व लीलाओं पर भी पुस्तकें लिखी गई है। यह क्रम निरंतर चल रहा है। यह सारा साहित्य एक धरोहर के रूप में जीवित रहेगा। कई धार्मिक व सामाजिक संस्थाओं द्वारा मासिक पत्रिकाओं आदि भी छप रहे हैं। मगर एक त्रासदी भी है जिस का उल्लेख करना अनिवार्य है कि हमारा समुदाय अपनी पहचान मार्तण्ड समाचार पत्र का पुनः प्रर्वतन नही कर पाया। मूलतः उर्दू में छपने वाला यह कश्मीरी पंडितों की कश्मीर से हमारे पलायन से कुछ पहले ही बन्द हो चुका था मगर स्व० पं० अमर नाथ वैष्णवी के अथक प्रयासों से यह जम्मू में पाक्षिक अवधि पर छपता रहा। इस का संपादन मैं ने दो वर्ष किया मगर कमजोर और दिशाहीन संगठनात्मक नेतृत्व से वैष्णवी जी के देहावसान से कुछ पहले ही बंद हुआ।

हम सामूहिक रूप में क्या चाहते हैं, अपनी 5000 वर्षो वाली जन्म भूमि कश्मीर कैसे लौट जाए, इस पर आम सहमति नहीं है। हमारी कितनी ही संस्थाएं है पार्टियां है, इतना दुखद नहीं जितना यह, कि वे महत्वपूर्ण मुद्दओं पर भी एक मंच पर नहीं मिलते हैं। 19 जनवरी,

13 जुलाई, 14 सिप्तम्बर नवरेह आदि अवसरों पर भी अलग अलग डफलियां बजाई जाती है, प्रत्येक सभा में भले ही कुछ ही की संख्या क्यों न हो।

इस समुदाय में एकता के अभाव, का अनुचित फायदा सरकारें और हमारे घोर प्रतिवादी उठा रहे हैं। यद्यपि मेरे कई मित्रों को नागवार गुज़रता होगा, मैं यह कहने से नहीं कतरुगा कि पहले हम अपनी समस्याओं के समाधान के लिए, एक दूसरे के साथ साझा करने के लिए, कश्मीर में शीतल नाथ जाया करते थे वहां युवक सभा व मार्तण्ड समाचार पत्र हुआ करते थे पर अब हमारा शीतलनाथ रिलीफ कमिश्नर आफिस बना है, यह एक विडंबना है।

हम सदा एक गहरी असंतुष्टता प्रकट करते हैं, झांकते है कि हमारे लिए सरकारों ने कुछ नहीं किया, हमारी किसी को चिन्ता नहीं है जो एक सत्य है मगर हम अपने भीतर झांक कर यह देखते है कि हम ने कौन सी पहल की और चूक कहां क्यों और किस से हुई। 27 वर्षो के बाद भी हमारी याचिका उच्चतम न्यायालय में निरस्त होती है जिस में हमने अपने शहीदों के कातिलों को दण्डित करने की विनती की थी। उच्चतम न्यायालय रोहिगया मुस्लमानों की अवैध घुसपेठ के संबंध में याचिका मंजूर करता है जो इस देश के हैं ही नहीं मगर कश्मीरी पंडितों की याचिका देखते ही खारिज की जा रही है। रोहिगयों के लिए संवधान की धारा 21 है मगर हमारे लिए नहीं।

कश्मीर में हमारे मंन्दिर, पुण्य स्थल, तीर्थ स्थान, आश्रम हमारे इतिहास और आस्था के साक्षी है और यह अपने स्वरूप और अस्तित्व को बचाने के लिए मानों संघर्ष कर रहे हैं। बाबरी ढांचे के लिए छद्य सिक्यूलर ब्रिगेड और वोट बैंक और तुष्टीकारण की बैसाखियों के सहारे राजनीति में अपना अस्तित्व बनाए रखने वाले राजनीतिक दल छातियां पीटते है उन को हमारे मंन्दिरों शिवालों,

देवस्थानों, आश्रमों, शिषु समाधियों, श्मशान स्थलों पर हुए हमलों, दूषित करने, जलाने और अतिक्रमण की अनेक घटनाओं की न कोई चिन्ता है और न कोई ध्यान देने की लालसा। जनूनी लोभी तत्वों ने, भू माफिया ने, और यहां तक कि, सरकारी संस्थाओं द्वारा घोर अतिक्रमण की घटनाएं जम्मू कश्मीर विधान सभा में शीघ्र पास होने और हमारे मन्दिरों को कानूनी और वैधानिक संरक्षण मिलने की अविलंभ जरूरत है। इस सिमत में शहीद पंडित प्रेम नाथ भट मेमोरियल ट्रस्ट एक प्रमुख या नोडल संस्था के रूप में कार्यरत है। इस संबंन्ध में विस्तृत जानकारी, इस समय, उपलब्ध कराना इस आलेख की सीमा के बाहर है।

हमारी दशा और दिशा का यह मेरा आलेख जो मैं ने आपको पढ़ कर सुनाया, हमारी विभिन्न प्रकार की समस्याओं का एक आमुख है समाधान अत्यावश्यक है और पं० प्रेमनाथ शास्त्री सांस्कृतिक शोध संस्थान द्वारा आयोजित ऐसे सम्मेलन एक अहम भूमिका निभा सकते है।

अंत में मैं पुनः इस बात पर बल दूंगा कि सामूहिक स्वरूप में हमारे समुदाय की दिशा चिन्ता का विषय होना चाहिए, हम केवल यह कह कर सदा पल्ला नहीं झाड सकते हैं कि कलचर बचा रहे हैं, कलचर बचा रहे हैं। क्षणिक, अनित्य और अस्थाई दृष्टिकोण वृहत स्तर पर तो टिक ही नहीं सकता क्योंकि वर्तमान के साथ साथ हमें निकट भविष्य की अनिवार्य रूप से चिन्ता करनी है।

संघर्ष की नई परिभाषा ढूंढ कर हमें इस में आए अकारण के आत्मसंतोष पर या लेक ऑफ इन्ट्रस्ट पर पुनर्विचार करना होगा। क्षमा कीजिए नेतृत्व ने हमे फेल किया और हमने नेतृत्व को फेल किया और बस, अब क्या किया जाए, एक निराशावादी सोच है और हमारी दिशा को निर्धारित नहीं कर सकती। एकता, सही नेतृत्व और निरन्तर संघर्ष ही हमारी नैया पार करवा सकते है।

निर्वासन और उत्सवधर्मिता

महाराज कृष्ण संतोषी

नीलमत पुराण में पैसठ (65), व्रतों, पर्वों, त्यौहारों का वर्णन है। इन में से कुछ व्रत केवल कश्मीर में ही प्रचलित हैं।

मिथहास के अनुसार कश्यप ऋषि की यह इच्छा थी कि कश्मीर में नाग और मानव मिल कर रहें। लेकिन नागों ने जब इस पर आपत्ति की तो ॠषि ने उन्हें शाप दिया कि अब उन्हें पिशचों के साथ रहना पडेगा। नागों के अनुनय विनय पर कश्यप ऋषि ने इस शाप को तनिक परिवर्तित किया और यह तय हुआ कि नागों को वर्ष में छः माह पिशाचों के साथ और बाकी छः माह मानवों के साथ रहना पडेगा। कालांतर में मानव प्रतिनिधि चंद्रदेव और नीलनाग के बीच जो सहमति हुई, उस के अनुसार मानव पूरे वर्ष कश्मीर में रह सकेंगे यदि वे नाग देवताओं की पूजा करें और साथ ही उन्हें कुछ विशेष व्रतों और त्यौहारों को मान्यता देनी होगी।

कश्मीर के परिप्रेक्ष्य में व्रतों और त्योहारों का इतिहास यहीं से शुरू हुआ। यहीं से एक विशिष्ट संस्कृति का भी उदय हुआ।

यहां यह बात स्पष्ट होनी चाहिए कि व्रत का सम्बंध व्यवहार के विषय में निषेधात्मक पालन से है और उत्सव किसी देवता, कृति या घटना की स्मृति में मनाया जाता है। हालांकि यह विभाजक रेखा भंग भी होती है जब व्रत के तत्व उत्सव में और उत्सव के तत्व व्रत में सम्मिलित होते है। नीलमत पुराण में निहित इन निर्देशों का पालन आज उस रूप में तो नहीं होता जिस रूप में यह आरम्भ में रहा होगा। समय और परिस्थितियां बदलने के साथ साथ इन के पालन में भी अंतर आता रहा है। कुछेक उत्सव तो इतिहास की उथल पुथल में खो भी गए। समय के साथ इन की संख्या घटती गई। आज कश्मीरी पंडित समाज कुछेक पर्व ही मनाते है जिन का

सम्बंध नीलमत पुराण के साथ जुडा है। पर आज ये पर्व हमारी अस्मिता के पर्याय बन गए है। हमारी विशिष्ट पहचान के निर्माण में इन व्रतों और उत्सवों का भी बडा योगदान है। यक्ष अमावस्या हो या काग पूर्णिमा या फिर हेरथ, पूरे विश्व में हमारा पंडित समाज इन्हें मनाते हुए अपनी परम्परा का सम्मानपूर्वक निर्वाह करता है। इन सभी पर्वो या उत्सवों को मनाने के अलग अलग ढंग हैं और इन ही से हमारी सभ्यता और संस्कृति पोषित होती है। उद्देश्य की दृष्टि से वे भले ही शुद्धिपरक और भक्तिपरक वर्गों में रखे जा सकते है लेकिन समग्ररूप में देखे तो उत्सवधर्मिता मनुष्य के मनोविज्ञान का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है और हमारे सामाजिक होने की अनिवार्यता भी है। भेद और विभेद मिटा कर हम एक साथ इन त्यौहारों के माध्यम से अपने ही अस्तित्व का उत्सव मनाते है।

व्रतों और उत्सवों का सम्बंध जहां धर्म और मिथहास से होता है वंहीं ये इतिहास और भूगोल से भी जुडे रहते हैं। वास्तव में धर्म, मिथक, इतिहास और भूगोल ये चारों ही मनुष्य की पहचान के आधार है। इन में से किसी एक का महत्व कम करके नहीं आंका जा सकता। मनुष्य की सोच चाहे जो भी दिशा ले, लेकिन अपनी अस्मिता का बोध उस में सदा सजग रहता है। उस की नियति या कहें परिस्थितियां चाहे उसे स्वदेश त्याग करवा ले या देशान्तर गमन, पर वह अपनी परम्परा का पूर्णतः त्याग नहीं कर सकता। वह अपनी पहचान में उसे सदा जीवित रखता है। नव भौगोलिक तथा सामाजिक परिवेश में भी वह अपने अतीत के साथ जुडा रहता है। यानि उस परम्परा के साथ सम्बद्ध रहता है जिस के प्रमुख अंग व्रत और त्यौहार होते हैं।

सन् 1990 के बाद का कश्मीरी पंडित समाज देश विदेश में बिखर गया है। पर इस के बावजूद भी वह अपनी विशिष्ट पहचान बनाए

रखने में सफल रहा है और यह विशिष्ट पहचान उतनी धार्मिक नहीं है जितनी सांस्कृतिक है। सांस्कृतिक चेतना कश्मीरी पंडित समाज में सदा से ही मौजूद रही है। इसलिए निर्वासन में भी विषय और विपरीत परिस्थितियों के बावजूद उन्होंने अपने व्रत और त्योहार नहीं त्यागे। उन्हें ज़िन्दा रखा और खुद को भी। हालांकि यह भी सच है कि मातृभूमि से बिछुडने का दुख उन को पल पल आहत भी करता रहा है।

कश्मीरी विस्थापितों पर यह बात बिल्कुल सही साबित होती है। आतंरिक संघर्ष के बीच फंसा वह एक तरफ अपनी आबोहवा, अपनी जडों या कहें अपने जिए हुए परिवेश को भूलना नहीं चाहता तो दूसरी और वह अपने ज़िन्दा होने से खुश जिजीविषा और चुनौतियों के साथ अपने होने को पुनः प्रमाणित करना चाहता है। अस्तित्व की यह सजगता अस्तित्व के उत्सव से जुडी हुई है। अस्तित्व का उत्सव हमारी सामाजिकता से जुडा हुआ है। हमारे समग्र अस्तित्व की यह एकता हमारे होने को ही समृद्ध करती है। गर्व की बात है कि चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में भी कश्मीरी पंडित समाज ने न अपनी उत्सव धर्मिता छोडी और न अपनी देशीयता। हालांकि नई भौगोलिक परिस्थितियों में इन के मनाने में कुछ जरूरी परिवर्तन दिखने लगे है जो हमारी प्रगति शील सोच से ही जुडी होती है। वैसे भी नए परिवेश में हम ने अपने देवी देवताओं की अनुकृतियां बनाई है और अपनी आस्था को मनोवैज्ञानिक स्तर पर जीवित रखा है। पर हमारे भीतर यह पीडा भी जगी हुई है कि हम अपनी मातृभूमि से निष्कासित हैं और उस प्राकृतिक विपुलता से दूर है जो हमारी आस्था को बल देता था। उन मौसमों से दूर है जो हमें अपने वैभव से आनंदित करता था। उन देवास्थानों से दूर है जहां हमारे पुरखे आध्यात्मिक ज्ञान का संर्वद्धन करते थे। संक्षेप में कहें तो उस विरासत से दूर है जो हम से छीनी गई। फिर

भी हमारी यह विरासत हमारी धमनियों में धडकती है जो हमें प्रेरित करती है कि हम स्वयं को अनाथ न समझे। बकौल एडवर्ड सैय्यद –Exiles always feel their difference as a kind of orphanhood – लेकिन कश्मीरी पंडित समाज ने भीषण संघर्ष के दौरान भी अपना कद ऊँचा रखा और जीवन को गरिमापूर्ण जिया। बदली हुई परिस्थितियों में भी हमारा समुदाय उम्मीद और उल्लास के साथ नवरेह मनाते हैं और पंचांग से अपने सामाजिक जीवन का निर्वाह करते हैं। पण पर्व मनाते हैं। सुखसुप्तिका अर्थात् दीपावली मनाते हैं। यक्ष अमावस्या पर यक्ष को खिचडी का भोग चढाते हैं। काग पूर्णिमा के दिन कौवों को अन्न खिलाते हैं लेकिन मन में यह संदेह भी उठने लगता है कि क्या हमारी भावी पीढियां इन सब पारम्परिक पर्वो का आगे निर्वाह कर पांएगे। पर यह संदेह हमें अधिक परेशान नहीं करता क्योंकि हमें यह विश्वास है कि आधुनिकता के बीच भी हमारी सोच परम्पराओं से भलीभांति जुडी हुई है। लेकिन मूलरूप से वे हमारी आत्मिक शाक्ति के स्रोत हैं।

आज भले ही हम पेसंठ वृतों और त्यौहारों को न मनाते हों लेकिन वर्तमान समय में हम जिन उत्सवों को मनाते हैं उन के दम पर ही हमारी जातीयता मान्य है। हम ने निर्वासन में अपने देवी देवताओं की अनुकृतियां बनाई और उन में प्राण प्रतिष्ठा की। भले ही आज हमारे पास अपना भूगोल नहीं है लेकिन हम इतिहास से निष्कासित नहीं हैं। हम कश्मीर में भले ही न रहते हो पर कश्मीर हमारे भीतर बसा हुआ है।

मिथहास के बल पर जीने वाले हम कश्मीरी पंडित खुद को एक बडी विरासत का उत्तराधिकारी मानते हैं और यदि सचेत होकर हम इस की रक्षा कर सके तो हम बहुत कुछ अब भी बता सकते है।

कश्मीर की महान् सांस्कृतिक विभूति आचार्य क्षेमेन्द्र

प्रदीप कौल (खुडब्ली)

कश्मीर जिसको शारदा पीठ के नाम से भी जाना जाता है हिन्दु संस्कृति का मुख्य केन्द्र रहा हैं। जिस भारतीय संस्कृति और दर्शन को आज सारे विश्व में ख्याति प्राप्त है उसके पीछे कश्मीर की देन और दरोहर का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। भारत में मुख्यत: विद्या के तीन प्रमुख केन्द्र रहे हैं। कश्मीर, काशी और उज्जैन। इन तीन केन्द्रों में कश्मीर और काशी के बीच तीखी प्रतिर्स्पधा थी। विद्वानों ने कश्मीर को काशी पर बडोत्तरी दी। उनका तर्क विचित्र परंतु नीतिसंगत लगता है। वे कहते है कि काशी तो शिव की धरती है परंतु 'म' और र वर्ण का अभाव काशी शब्द में है। कश्मीर की धरा शिव का ही रुप है परंतु म से मनमथ और 'र' से रति दोनों कश्मीर में विद्यमान है। प्रकृति की गोद में हिलोरे ले रही कश्मीर प्रेम और सौन्दर्य की धरती है। मनमथ और रति इसी प्रेम और सौन्दर्य का सूचक है।

हिन्दु संस्कृति का प्रवाह कश्मीर में पुरातनकाल से चला आ रहा है। ऋग्वेद के 10वें मण्डल के 75वें सुक्त की 5वीं रिचा में कश्मीर का वर्णन वितस्ता के माध्यम से हुआ है। महाभारत का वह रोचक प्रसंग जिसमें भगवान् श्रीकृष्ण कश्मीर के पंडित के द्वारा यज्ञ रचाने के लिए तत्तपर है आज भी दोहराया जाता है। इस बात से यह सिद्ध होता है कि महाभारत काल से ही कश्मीरी पंडितों ने अपनी बुद्धि का लोहा मनवाया था।

कश्मीरी पंडितों ने साहित्य के क्षेत्र में बहुमूल्य योगदान किया और अगर इस पर लिखा जाए तो कितने ही वर्ष लग जाए।

साहित्य के विकास में कश्मीरी पंडित अग्रनीय रहे हैं। देश का समस्त साहित्यिक भूगौल कश्मीरी पंडितों ने अपने असाधारन प्रतिभा के रंगों

से एक उत्कृष्ट रंगोली की भांति सुन्दर और नवीन बनाई है।

इन्ही महान् कश्मीरी पंडित विभूतियों में आचार्य क्षेमेन्द्र एक ज्वालायामान तारे की तरह भारतीय संस्कृतिक और साहित्यिक आकाश पर आज भी चमक रहा है। आचार्य क्षेमेन्द्र का काल ग्यहारवी शताब्दी के आरंभ से उसी सदी के सातवें दशक तक माना जाता है।

उनका प्रारम्भिक जीवन बडे ही वैभवपूर्ण वातावरण में व्यतीत हुआ। उनका परिवार सम्पन्न था। उनके पिता प्रकाशेन्द्र मंत्री पद पर आसीन थे। उनके दादा जिनका नाम सिन्धु था आमात्य पद पर थे। पिता के प्रति क्षेमेन्द्र को बडा आदर था तथा महाभारत मंजरी में क्षेमेन्द्र ने अपने पिता की एक लंबी प्रशस्ति लिखी है। अपने माता पिता के प्रति आदर का भाव कश्मीरी पंडितों का एक मौलिक गुण रहा है। इसका भरपूर उदाहरण हमें क्षेमेन्द्र में मिलता है। क्षेमेन्द्र के पुत्र सोमेन्द्र एक योग्य साहित्यकार थे। क्षेमेन्द्र के पिता प्रकाशेन्द्र शैव थे। उन्होंने अपने हाथ में शिवलिंग का गाढालिङ्गन करके अपने प्राणों का परित्याग किया। स्वभाविक था कि पिता के शैव होने का प्रभाव उनके पुत्र पर भी पडा और वे शैवमत को मानने लगे।

क्षेमेन्द्र बडे ही तेज बुद्धि के धनी थे। अपने चारों ओर वे अपनी पैनी नजर से सबकुछ समझ लेते। जीवन का व्यवहार और अन्य साधारण सी बातें उनके जीवन पर असर डालती। उसी के बल पर वे आगे जाकर एक बहुआयामी और बहुमुखी प्रतिभा के रुप में सामने आये। उनके पिता ने बडे यत्न से उन्हें श्रेष्ठतम गुरुों के चरणों में विद्यागृहण के लिए भेजा। अतः उस समय के सबसे विख्यात गरु आचार्य अभिनवगुप्त पाद के श्रीचरणों में उन्होंने विद्या गृहण की। महाभारत मंजरी में वे स्वयं इस बात का उल्लेख करते है।

आचार्य शेखर मणेर्विद्याविवृति कारणः
श्रृत्वाभिनवगुप्त ख्यात् साहित्यं बोध वारिधेः।।

समय के साथ साथ वे भागवत आचार्य सोमपाद की ओर आकृष्ट हुए। उन्होंने फिर वैष्णव धर्म का भी अङ्गीकार किया। भरतमंजरी में इस श्लोक से इस बात की पुष्टि होती है।

श्रीमदभागवताचार्यसोमपादाब्ज रेणुभि
धन्यतां यः परां प्राप्तां नारायणपरायणः।।

यह बात बडी रोचक है कि क्षेमेन्द्र ने आचार्य अभिनवगुप्त की अपेक्षा आचार्य सोमपाद को अधिक आदर प्रदान किया। उनके ही प्रभाव से क्षेमेन्द्र ने देशअवतारचरित्र नामक ग्रन्थ लिखा। भगवान व्यास के प्रति उनका असीम आदर था। व्यासजी को वे अपना परमगरु और संस्कृत के सर्वश्रेष्ठ कवि मानते हैं। अपने आप को वे व्यास का दास मानते थे और व्यासदास के ही उपनाम से प्रसिद्ध हुए। उन्होंने कवि कुलगुरु कालिदास के साहित्य का भरपूर रसपान किया था।

क्षेमेन्द्र ने कोश, गीत, गाथा एवं देशी भाषाओं के काव्य का भी अध्ययन किया था। कविकंठाभरण में वे इसी बात का संकेत करते हैं।

गीतेषु गाथास्थव देशभाषाकाव्येषु दधात् सरसेषु कर्णम्

वे मित्रों से घिरे रहते उनके मित्र योग्य और शिक्षित थे। वे नाटक और अभिनय देखते संगीत सुनते और भव्य परिधान पहनते। कविकंठाभरण में इस का वे संकेत करते है। लिखते है।

नाटकाभिनयप्रेक्षा श्रृङ्गरालिङ्गिता मतिः
कवीनां सम्भवे दानं गीतेनात्माधिवासनम्।।

क्षेमेन्द्र शैव और भगवत धर्म को अपना कर भी कटरवाद के अनुयायी नही थे। उनकी दृष्टि सदा खुली थी और प्रत्येक अच्छे प्रभाव को अपनाने के लिए वे सदा तैयार रहते। यही कारण है कि बौध धर्म की मधयान शाखा का भी उनकी दार्शिनिक दृष्टि पर प्रभाव पडा। तभी तो उन्होंने बौधअवयान कल्प लता नामक ग्रण्थ लिखा और सिद्ध किया

कि वे धार्मिक कट्टरता के सर्मथक नही थे और सच्चे मानो में सर्वधर्मसंभाव के प्रतिनिधि थे। इस गुण को कश्मीरी पंडितों ने आज के र्निवासन के जीवन में (जिसका मूल कारण धार्मिक कटट्रवाद ही है) भी अपनाया है।

आचार्य क्षेमेन्द्र जैसा महामानव भारत में आजतक भी पैदा नही हुआ। वे बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। उन्होंने साहित्य की हर शाखा पर मौलिक ग्रन्थ लिखे आधुनिक काल में गुरुदेव रबिन्द्रनाथ टैगोर में क्षेमेन्द्र एक फीकी झलक मिलती है।

आचार्य दीनानाथ जी यक्ष के अनुसार क्षेमेन्द्र श्रीनगर में आज कल के बहुदीन मशजिद के प्रागण में अपने शिष्यों का मार्गदशन किया करते। इस स्थान को व्यासपिण्डव नाम से जाना जाता है। कुछ वर्ष पूर्व तक इस स्थान पर लोग व्यास पुर्णिमा के दिन जाया करते थे।

श्री अभिनव गुप्त पाद के चरणों में उन्होंने साहित्य की शिक्षा प्राप्त की। अपने आरभिंक काल में उन्होंने बडे बडे ग्रन्थों को छोटा करने का प्रयास किया और सफल भी रहे। उन्होंने बृहत्कथा मंजरी, रामायण मंजरी, महाभारतमंजरी लिखी। गुणाडय ने बृहत्कथा मंजरी लिखी थी। इसमें भारत के विभिन्न चक्रवर्ती राजाओं के जीवन काल की कथाएं सम्मलित है। राजा उदद्यन की शौर्य गाथा भी इसमें मिलती है। बृहत्कथा असली पैशाची में लिखाी गई। इसको छोटा करके क्षेमेन्द्र ने आज तक इसे बचाए रखा क्योंकि मूल बृहत्कथा लोप हो गई है। इसी तरह उन्होंने रामायण को छोटा करके रामायण मंजरी लिखी और महाभारत को छोटा करके महाभारत मंजरी लिखी। ऐसा लगता है कि जैसे आचार्य क्षेमेन्द्र को इस बात का आभास था कि ऐसा भी समय आएगा जब लोग पूर्ण ग्रन्थों को पढने का पूरा समय नहीं जुटा पायेगे इस कारण उनको लगा कि रामायण, महाभारत और बृहत्कथा को छोटा करना आवश्यक है। यह उनकी दूर्दशता और आने वाले समय की नब्ज पहचानने की क्षमता को सिद्ध करता है।

संस्कृत साहित्य में छन्द शास्त्र एक आवश्यक अंग माना जाता है। इसी छन्द शास्त्र पर आचार्य क्षेमेन्द्र ने एक ग्रन्थ सुवृत्तिलक लिख कर इसे आसान बना दिया है।

सुवृत्तिलक एक छोटा ग्रन्थ है परंतु उपयोगियता की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इस पुस्तक को पढने के बाद छन्द शास्त्र को समझने में बडी आसानी होती है।

कश्मीर में ग्यहारवीं शताब्दी उथल पुथल से भरी थी। मुस्लमान आक्रमणकारी कश्मीर राज्य के बाहरी इलाकों पर दस्तक दे रहे थे। काबुल के हिन्दु शाही राजाओं की हार हुई थी। वहां इसलामी कटरवाद की जडे जम चुकी थी। क्षेमेन्द्र इस घटनाचक्र से अनभिज्ञ नही थे। इस चुनौती का सामना करने के लिए एक स्वच्छ समाज की आवश्यकता थी। समाज में धार्मिक मूल्यों का अनुसरण हो इस नजर से उन्होंने (1050 ई0 के आसपास) समयमातृिका ग्रन्थ की रचना का एक मात्र उददे्श्य यही था कि समाज की कुलीन वर्ग न सिर्फ अपने आय को मनोरंजन में ही बरबाद करें बलकि देश और धर्म की रक्षा के लिए वे अपने आप को समाज को प्रेरित करने में लगाऐ। इस ग्रन्थ में क्षेमेन्द्र बडे रोचक ढंग से वेशायों कुटिनियों और विटों के बारे में लिखते है। किस तरह यह समाज के कुलीन लोगों को अपने जाल में फंसा कर उनका समूल नाश करते है। किस तरह एक नवयोवना वेश्या कलावती अपनी वृद्ध कुटिनी कंकाली के साथ मिलकर उस समय के धनी व्यवसायी शंख और उसके बेटे पंख (पंङ्ख) को अपने जाल में फंसा कर उनका सारा व्यापार और संपूर्ण धन सम्पति ठग लेती है।

यहा कंकाली जो एक वृद्ध कुटिनी है उनका जीवन चरित्र और चित्रण साहित्य की दृष्टि से संसार के सर्वश्रेष्ठ साहित्य में रखा जा सकता है। यह उनकी असाधारण प्रतिभा का कमाल है। समयमात्रिका ग्रन्थ से क्षेमेन्द्र की प्रासंगिकता आज भी मोजूद है। समाज के सारे वर्ग क्षेमेन्द्र

की पैनी नजर से अछूते नही रहे। वे समाज को करीब से देखते और लोगों के दुःख दर्द में सहभागी बन जाते। आजकल की तरह उस समय भी कश्मीर में अफसरशाही का दौर दौरा था। नर्ममाला ग्रन्थ में वे लिखते है कि किस तरह कायस्थ (आजकल के कर्लक) रिश्वत लेकर मोटे ताजे हो जाते है। परिहास और तीक्षण व्यंग के माध्यम से वे कायस्थ और अफसरों पर जो गरीबों का रक्त चूस लेते गहरी चोट करते है।

कलाविलास ग्रन्थ में वे एक महाठग मूलदेव की बात करते है। मूलदेव जिसकी तुलना आजकल के नटवरलाल से की जा सकती है अपने शिष्य चन्द्रगुप्त को लोगों को ठगने के तरीके और पैंतरे सिखाता है। क्षेमेन्द्र समाज को इनसे सचेत कराना चाहता है।

कहा जाता है कि आचार्य क्षेमेन्द्र ने कुल 70 ग्रन्थ लिखे परंतु आज उनके बीस या पचीस ग्रन्थ ही उपलब्ध है। इन में लोकप्रकाश, चारुचर्या, दशअवतारचरित्र, देशोउपदेश, दर्पदलन आदि सम्मलित है। कवियों के लिए उन्होंने कविकण्ठाभरण लिखी। यहा इस बात पर ध्यानदेने की आवश्यकता है कि उनकी नजर समाज के सबसे सशक्त व्यक्ति से लेकर कायस्थ और ठग तक थी। यही बात क्षेमेन्द्र को बाकी लेखकों या आचार्यों से अलग कराती है। अग्रेजी शौधकर्ताओं ने उन्हें Polymath की संज्ञा दी (कीथ)(kieth etc)

कलहण की राजतरङ्गणी से पहले भी कश्मीर में इतिहास लिखे गए जिनका लाभ कलहण ने अपना प्रसिद्ध इतिहास लिखते समय उठाया। यह बात भी है कि कलहण क्षेमेन्द्र की नृपावली को इतिहास कम और एक काव्य ज्यादा मानते है। आचार्य क्षेमेन्द्र की सबसे बडी देन संस्कृत साहित्य में है। भारतीय काव्य शास्त्र में औचित्य सिद्धांत की महता का प्रतिपाधन आचार्य क्षेमेन्द्र ने ही किया। औचित्यविचारचर्चा ग्रन्थ में वे लिखते है कि

2006 में महाचण्डी यज्ञ के आरम्भ पर राजकमल गार्डन जम्मू में ''भूमि पूजन''

औचित्यं रससिद्धस्य स्थिर काव्यस्य जीवितम्

काव्य में औचित्य को रस का जीवनधार माना जाता है जो वस्तु जहां उचित है वही उसका स्थान है नही तो वह अनुचित है। औचित्य को Principle of Property भी कहा जाता है। औचित्य सिद्धांत का विचार और मूल्यांकन इस छोटे से शौधपत्र के परिवेश से बाहिर है। परंतु इस बात पर कोई संदेह नहीं आचार्य क्षेमेन्द्र जैसे महाकवि, समीक्षक, समालोचक, हास परिहास के ज्ञाता इतिहास लिखने वाले, विभिन्न मतो और दर्शनों के पंडित, काव्यसिद्धांत के पति पाथक आज तक भारत में पैदा नहीं हुआ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि क्षेमेन्द्र कश्मीरी पंडितों की संस्कृति, समाज और जनसाधारण के हितेषी के रूप में सबसे सशक्त हस्ताक्षर है।

नमः शम्भवाय च
मयो भवाय च
नमः शंकराय च
मयस्कराय च
नमः शिवाय च
शिवतराय च

We offer our Salutations to Thee -
the Giver of Happiness.

We offer our Salutations to Thee -
the Auspiciousness.

We offer our Salutations to Thee -
The Bestower of Bliss
and still greater Bliss

अख गाशि तॉरुक प्रेम नाथ शास्त्री

प्यारे भान

दौरिफलक छु केंचॅन अरशॅस रवारान तु केंचॅन सुत्य तगोफुल वरुतॉवॉन। म्योन मुदाह तु मकसद छु यि ज़ि काशिरयन बटन हॊन्द अख सु नूरुक आगुर युस 4 अक्टूबर 1920 ई0 मंज़ व्येजिब्रारि थनु प्यव तु नाव प्योस पंड़ित प्रेम नाथ शास्त्री। यिमॅव कॅरि तिछ्य कॉमि यिमु नामुमकिन ऑसु बासान, तु पॅनुन्य धर्म तु संस्कारॅचि वतु कॅड़ुर्यख बॅदि। यिहेजु कामि छे फखरस लायख ति क्यॉज़ि यिमव थाव असि कर्मकाण्डुच ज़ान चाहे किताबी या केस्ट या सीडी कि शकलि मंज़ दॅसितियाब यिमु सुहिलयॅचृ ऑसु नु अमि ब्राड़ द्रीठथ गामचृ। कॅशीर येति ज़न दमु दमु कॉह नॅतु कॉह जगड़ु ओस ऑसानय तु तॅमियुक खुमियॉज़ु ओस बटुनय प्यवान तुलन मगर फखरच कथ छे यि ज़ि ज्योतशी जी गयि नु ज़ाह पस हिम्मत तु पॅनुनि कॉमि सुत्य रुदय मशगूल। 1990 ई0 कि मैग्रेशनि वज़ि ति रुद यिम सान्य कॉम करान तु पञ्चाङ्ग वोत प्रथ कुनि गरस मंज। तु ॲनन्येन अछन आव गाश।

स्व शास्त्री ज़ियन कोर कर्म काण्ड तैयार युस ज़न किताबी केस्ट तु सीडी किस रंगस मंज़ छु दसतियाब। यूतुय न मगर यिमव कोर गीता जी होंद तरुजमु पूरु 18 अध्यान होंद ति युस जन केसट तु शायद सीडी कि शकलि मंज़ उपलब्द छु।

स्व शास्त्री जियस ऑस वीदन त उपनिशदन पूरि पूर जान त महरत। शास्त्री जीनि अन्तर दयान गछ़न पत तुलयि सोरुय बोर यिहनदेय ज़िठय सनतानन पं0 ओंमकार नाथन। त बॅखति नावस लोल बरिथि लॅलप्रकाश असि ब्रोड़ कुन ओन यि छु पॅज़्य किन रयेश वारि होंद रयेश गरपयेति संस्कारन छु लोल मेलान। पं0 ओंमकार नाथ शास्त्री जीयन त म्यान्य ग्वर देव पं0 भूषण लाल शास्त्रीयन डूगरन खातिर रणवेश्वर नावक पंञ्चाङ्ग जारी यि अख थयेकॅन्य लॉयक कोम। ब छुस अथ शोध संस्थायि नमन कॅरान तु अमिचि कामयाबी छुस हमेशि कॉछान।

गुरु तेगबहादुर और कश्मीर : संदर्भ
मैथिलीशरण गुप्त की प्रबंध कविता

महाराज कृष्ण संतोषी

Unlike other religious identities which are vitalised by fall of martyrs, Hinduism has no such legacy. This should not be construed to mean that Hindus as a community lack bravery or they cannot die for a cause.

The point very simple is that religious has this far not promted Hindus to consciously or deliberately stake or give up their life.

Dipankar Gupta

उपरोक्त कथन के संदर्भ में यह कहना जरूरी है कि हमारे यहां अवतारी पुरुषों की परम्परा है जैसे गीता में कहा गया है

यदा यदा ही धमर्स्य ग्लानिर्भवित भारत
अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम

भगवान राम और कृष्ण इसी परम्परा में आते है। यहां तक कि बुद्ध भी अवतार के रूप में हिन्दू धर्म ने मान्यता दी है।

अवतारी पुरुष पुरुषोत्तम के रूप में पूजे जाते है और लोगों की आस्था में समा जाते है। ईसाइयों, यूहिदयों और मुसलमानों के यहा शहादत की परम्परा है। वे अपने शहीदों के प्रति निष्ठाभाव से नतमस्तक होते है।

हिन्दू धर्म में भी त्याग की भावना से प्रेरित ऐसी महान विभूतियां हुई है जिन्होंने धर्म कार्य के लिए खुद को अर्पित किया। मिथहास और इतिहास दोनों में इन का उल्लेख मिलता है। ऋषि दधीचि का त्याग और बलिदान सर्वविदित है।

कालांतर में राष्ट्र के प्रति बलिदान भी शहादत की दृष्टि से देखा जाने लगा। इतिहास में सिख गुरुओं की शहीदी भावना का

गौरवपूर्ण उल्लेख कौन भूल सकता है। गुरु तेगबहादुर की शहादत इन में से एक ऐसी गौरव गाथा है जिसे सुनकर नास्तिक भी नतमस्तक हो जाएं।

औरंगजेब के शासन काल में जब कश्मीरी पंडितों पर भी धर्मांतरण का दबाव बडा और शासकीय अत्याचार अधिक होने लगा तो पूरे समाज में असुरक्षा की भावना तीव्रतर हुई। इतिहास पहले भी उन के साथ ऐसे कई अन्याय कर चुका था जिन की स्मृतियों से वे खुद को कभी मुक्त नहीं कर पाए। इस बार पंडित कृपाराम दत्त के नेतृत्व में पांच सौ कश्मीरी पंडितों का जत्था गुरु तेगबहादुर के यहां आनंदपुर पहुंचा और उन को अपनी व्यथा कथा सुनाई। फिर जो हुआ वह सब इतिहास में दर्ज है।

गुरु तेगबहादुर का अमर बलिदान उन की शहादत भले ही एक ध ार्म विशेष के साथ सम्बद्ध रही है लेकिन मानव अधिकारों की दिशा में यह महत्वपूर्ण हस्तक्षेप था। आज हम जिन लोकतांत्रिक अध्किारों की चर्चा करते है उन में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सर्वप्रमुख है। इसी अधिकार के अन्तर्गत मनुष्यों का निज धर्म पालने की आजादी मिली हुई है अर्थात् कोई किसी को बलात धर्म परिवर्तन के लिए बाध्य नही कर सकता और आज यह संवैधानिक अपराध है। इस दृष्टि से देखैं तो औरंगजेब जैसे कट्टपंथी शासक मानवता के अपराधी है और किसी भी तर्क से उन के धार्मिक दृष्टिकोण को सही नही ठहराया जा सकता है।

गुरु तेगबहादुर की शहादत इसी मूलभूत अधिकार के पक्ष में है। वे सिख धर्म के नौवे गुरु के रूप में ही नही मानव अधिकारों के रक्षक के रूप में भी हमारे लिए चिरस्मरणीय है।

हिन्दी साहित्य में समय समय पर नायकों/महानायकों पर खंडकाव्य और महाकाव्य लिखे जाते रहे है जिन का यहां उल्लेख करना

अनावशयक है। हमारे राष्ट्रीय कवि मैथिली शरण गुप्त ने गुरु तेगबहादुर के बलिदान का राष्ट्रीय महत्व समझते हुए उन पर एक प्रबंध कविता की रचना की। आधुनिक हिन्दी साहित्य में यह गुरु जी पहली ऐसी रचना है। उन से पहले रीतिकालीन कवि सैनापति ने ब्रज भाषा में गुरुजी पर कविता लिखी थी। आश्चर्य यह भी है जिन कश्मीरी पंडितों के लिए गुरु जी ने अपना बलिदान दिया, उन के साहित्य में भी वे अनुपस्थित है। क्या इस का कारण यह है कि वे सिख इतिहास का ही हिस्सा रहे?

जो भी हो गुरु जी एक आध्यात्मक महापुरुष ही नही बल्कि हमारे इतिहास के एक नायक भी है।

मैथिलीशरण गुप्त ने नाटकीय अंदाज में अपनी इस प्रबंध कविता की शुरुआत की है जो आगे बढकर नायक के उदात्त चरित्र को उजागर करता है।

तेगबहादुर, हां वे ही थे
गुरु पदवी के पात्रा, समर्थ
तेगबहादुर, हां वे ही थे
गुरु पदवी थी जिन के अर्थ

हरि चिन्तन और हरिजन की संगति में बैठा रहने वाला तेगबहादुर जिन का वास्तविक नाम त्यागमल रखा गया था, अपने चारित्रिक विकास के होते होते अध्यात्म के शिखर पर आ पहुंचे थे। आचार विचार सब शुद्ध। गद्धी का तनिक भी लोभ नहीं। औरंगजेब काल में जब कश्मीरी पंडितों पर अत्याचार बढा तो

कुछ कश्मीरी ब्रह्मण आकर
गुरु से करने लगे गुहार
डूब न जाय हाय ! हे गुरुवर

निज नन्दनवन सा कश्मीर
बरसाते हैं यवन काल धन
धेनु रुधिर धारा का नीर

यहीं से कविता में गति आ जाती है। गुरु जी का क्षात्र धर्म कश्मीरी विप्रजनों को निर्भय करते हुए औरंगजेब के सम्मुख एक ऐसी चुनौती रखते है जो बादशाह अंततः परास्त कर देता है। गुरु जी के धर्मशील व्यक्तित्व और मानवीय सरोकारो ने एक क्रूर शक्तिशाली सम्राट के इरादों को विफल कर दिया।

इधर औरंगजेब को यह दृढ विश्वास था कि गुरु जी निश्चित ही इस्लाम कबूल करेंगे। ऐसा होते न देख गुरु जी और उन के शिष्यों पर घोर अत्याचार होने लगे पर वंछित फल न मिलने पर एक एक करके उन की हत्या कर दी गई। गुरु जी ने भी सिर दे डाला और अपनी आस्था की आन रखी। उन्हें यह बोध था कि उन के इस बलिदान से सुप्त समाज जाग जाएगा। मैथिलीशरण गुप्त की कविता का मुख्य उद्देश्य जहां पर उदात्त चरित्र के निस्वार्थ त्याग और बलिदान को चित्रित करना था वहीं औरंगजेब जैसे राजाओं को मानवता का महत्व भी समझाना था।

शाही मजहब के भी ऊपर
मानव धर्म न भूले शाह
मिलते नही जलधि में जाकर
एक पंथ के सभी प्रवाह

गुरु तेगबहादुर की शहादत के पीछे इस देश की यही मानवतावादी परम्परा सक्रिय रही है जिस का आदर्श था सह अस्तित्व और वैचारिक स्वातंत्रय। यही कारण है कि भारत देश में विश्व के सभी धर्मों के अनुयायी रहते है।

मैथिलीशरण गुप्त की यह कविता उन की प्रतिभा का सफल प्रतिनिधित्व भले ही न करती हो लेकिन अपने काव्य उद्देश्य में यह विफल नही है। कथन में न जटिलता है न अनर्गलता। भाषा भी सहज है और सम्वाद शैली में अपनी परिणति को पहुंचती है।

था आनंदपुर प्रांगन में
हाहाकार की जयजयकार
रोते रोते गाते थे सब
सिर दे डाला दिया न सार
उबल उठे उत्तप्त पंचनद
रहा क्षोभ का वार न पार
हर हर करके हहराये वे
सिद दे डाला दिया न सार

इस प्रबंध कविता का कश्मीरी अनुवाद कुमार अशोक सराफ घायल ने किया हुआ है जो उत्पल पब्लिकेशन्स नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित हुआ है।

महिलायें तथा लड़कियां बाल न काटें। हमारी सभ्यता में बाल काटना अपशगुन है।

मस छुयु वस

मातृ शक्ति के प्रति
एक धरोहर का फूल

स्व0 डा0 फूला कौल

कशमीरा माँ की कन्याओ
धरोहर माँ की लाई हो
उसे आगे बढ़ाना है
चलते ही चलते जाना है।

शारदा माँ की शक्तियो
पंचस्तव सी बहा करो
अमृत सब को पहुंचाना है
नव जीवन दान देना है।

वितस्ता माँ की धाराओ
परम्परा कश्यप भूमि की जो
कण कण में बसाना है,
जन जन में सुलगाना है।

शारिका माँ की शेरनियो
साहस रोम रोम में लाई हो
हर पीढ़ी तक पहुँचाना है
चलते ही चलते जाना है।

माँ राज्ञा की भुजाओ
अलंकार जो साथ में लाई हो
हर शक्ति में पिरोना है
माँ दुर्गा जैसी होना है।

माँ शैला की शैल पुत्रियो
शिल्ला सी दृढ़ता लाई हो
निज मान बनाये रखना है
शैला सी बन के चलना है।

माँ ज्वाला की मशालो
प्रेमाग्नि साथ में लाई हो
हर क्षण सुलगाये रखना है
बन ज्योत प्रकाश दिखाना है।

क्षीर भवानी की धाराओ
माधुर्य जो साथ में लाई हो
रोम रोम में पिरोना है
आगे ही आगे लेना है।

माँ शिवा की शिवानियो
श्याम घटा सी छा जाओ
तांडव हर मन में रचाना है
नव पल्लवित माँ को करना है

माँ त्रिपुरा की सुन्दरियो
सबल सजग सी रहा करो
यह बीज सब में बोना है
स्वाभिमानी होके जीना है।

मेरी माँ की सुन्दरियो
सभ्य ज्योत जो लाई हो
जन गण में प्रकाश करो
हर चितवन में पहुचा दो

कोटा के स्वाभिमान को,
सुगंधा के ज्ञान को,
माँ लल्लध्यद्द के वाख को,
भवानी दयद्द के नाद को
अरिणमाल की ताल को,
परमानन्द के हल से सीचो
राज़दान के शिव को जगाना है
ज़िन्द कौल की हक से तराना हे
इक इक फूल पिरोना है

पवन संध्या

स्व0 डा0 फूला कौल

नागस मंज़ वसुवुयि
नुगिञ ज़न नचुवयि
वसव असि धारि धारे
श्रेह मायि हुन्द फेरे
श्राण तुति करअवुयि
नुगिञ ज़न नचुवयि।।..... नागस......

यि दर्शुन यस बने
शेहलथ प्येयस तने
केन्यव तापव तचवयि
नुगिञ ज़न नचुवयि।।..... नागस......

पवन मुणि संज़ि तपस्याये
दर्शन ध्युतुथ अथ जाये
समिथ सन्ध्या करवयि
नुगिञ ज़न नचुवयि।।..... नागस......

आथवारि दोह ज़ाये

भुद्रिप्यथ मावस आये

नक्षत्र मघ आसुयि

नुगिञ ज़न नचुवयि।।..... नागस......

अमृत छुस पुराव

बट्ट नागिञ प्योस नाव

दिल्ल फोल्ल अथ जाये

नुगिञ ज़न नचुवयि।।..... नागस......

वेरनाग प्यट्ठ सखरा

कपरन छु पढ़ावा

मंज़ स्यद्दर हाल अयायि

नुगिञ ज़न नचुवयि।।..... नागस......

दूरि प्यठ संगथ आये

शास्त्री जीयस सअति नखि माये,

दूरयर नय ज़रवयि

नुगिञ ज़न नचुवयि।।..... नागस......

पोषमाल संगथा ह्यथ

पोष ह्यथ अथनय क्यथ

पवन संध्या करवयि

नुगिञ ज़न नचअवयि।

नागस मंज़ वसवयि।

नुगिञ ज़न नचुवयि।।

शैवाचार्य लक्ष्मण जू का व्यक्तित्व

प्यारे हताश

शिवागम शक्ति सम्पन्नं षट्त्रंषतत्व वेदकम्।
शिवरुप समापन्नं श्री लक्ष्मणं वन्दे शिवात्मकम्।।

अर्थात् मैं साक्षात शिवस्वरुप स्वामी लक्ष्मण जू की वन्दना करता हूँ जो आसाधारण अधिकार से सम्पन्न होने के कारण शैवदर्शन सम्बन्धी सभी आगम शास्त्र, तंत्र शास्त्र, प्रत्यभिज्ञा शास्त्र और स्पन्द शास्त्र के निश्णात् व्याख्यात और तत्कालिक समावेश के प्रदाता है। वे स्वयं शक्ति सम्पन्न और शैव दर्शन के सभी 36 तत्वों के ज्ञाता हैं।

भौतिकवाद की ओर अंधी दौड़, वैज्ञानि भोगवाद एवं पास्चात्य सभ्यता से आधुनिक युग के प्रायः अधिकतर लोग निज निज धर्म के मार्ग से चयुत हो रहे हैं। उन्हें अपने अपने धर्म के मार्ग पर पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए पृथ्वी पर किसी न किसी महापुरुष सन्त अथवा फकीर को अवतरित होकर अपनी जीवन लीलाओं एव अपने अमृतमय उपदेशों से मार्गदर्शन करना पड़ता है। ऐसे महापुरुष अपनी आत्मा को उभारने के लिए जन्म लेते हैं साथ ही अपने सान्निधय में आए हुए साधकों का भी उद्धार कर देते है।

मोक्ष की स्थिति तक पहुँचने से पहले एक प्राणी को इस भवसागर में बार बार जन्म लेना पड़ता है और इसका ज्ञान केवल योगियों एवं सिद्ध पुरुषों को ही होता है। इसीलिए श्रीमद् भगवद्गीता जी के चौथे अध्याय के पांचवे श्लोक में कहा गया है

बहूनि में व्यतीतानि जन्मानि तवचार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि नत्वं वेत्थ परन्तप।।

अर्थात् हे परंतप अर्जुन ! मेरे और तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं उन सब को तू नहीं जानता है किन्तु मैं जानता हूँ।

दुर्भाग्यवश अधिकतर लोग जो इस संसार की मायारुपी कीचड़ में फंसे होते है अपने पूर्वजन्मों के बारे में अनभिज्ञ होते है। मानवचोला धारण करने से पहले न जाने कितनी योनियों को धारण करता हुआ प्राणी यहां पहुंचता है। अपने अपने कर्मो के अनुसार ही हर प्राणी 84 लाख योनियों को पार करता हुआ मानव चोला धारण करता है। किसी भी प्राणी की जीवन यात्रा एक ही जन्म से प्रारम्भ नहीं होती है और न ही एक जन्म में समाप्त होती हैं। इसीलिए श्री कृष्ण जी ने अर्जुन को समझाते हुए कहा कि

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युधुवं जन्म मृतस्य च।

अर्थात् जन्मे हुए की मृत्यु निश्चित है और मरे हुए का जन्म निश्चित है। परन्तु योगी एवं सिद्ध सन्त जन अपने विवेक एवं आत्मज्ञान से जन्ममरण के इस मायावीय रुप को समझ कर हर समय आम जनता के उद्धार एवं सुधार के कार्यो में रत रहते हैं।

हमारे इस कश्मीर मण्डल में ऐसे सिद्धों एवं सन्तों की कोई कमी नहीं रही। यह सन्त आध्यात्मिक नभ पर चमकते सितारों की तरह जगमगाते हैं और अपने प्रभामण्डल से अपने आसपास के सम्पूर्ण परिवेश को शुभ एवं शुक्ल बना देते है।

यहां मैं जम्मू कश्मीर के एक महान दाशर्निक, शैवाचार्य, वर्तमान युग के कहे जाने वाले अभिनवगुप्त स्वामी लक्ष्मण जू के महान व्यक्तित्व की चर्चा करना चाहता हूँ। नवम्बर 1981 को सायं के समाचारों में मैंने एक दिन यह समाचार सुना कि भारत की प्रधानमत्री श्रीमती इन्द्रा गांधी आज ईश्वर आश्रम निशात में स्वामी लक्ष्मण जू महाराज के आश्रम में स्वामी जी से मिलने के लिए गई। उस समय मुझे यह जानने की उत्सुकता हुई कि क्या स्वामी लक्ष्मण जू का व्यक्तित्व इतना ऊंचा है जिन्हें मिलने के लिए भारतवर्ष की प्रधानमंत्री उनके आश्रम में चली गई। बाद में पता चला कि श्रीमती इन्द्रा जी जब भी जम्मू कश्मीर के

दौरे पर आती हैं, स्वामी लक्ष्मण जू के दर्शन के लिए उनके आश्रम में अवश्य जाती हैं। इस महान शैवाचार्य का जन्म 9 मई 1907 को श्रीनगर में श्री नारायण जू रैणा के घर में हुआ। इनकी माता जी का नाम अरण्यमाली था। इनके जन्म की सूचना जब उस समय के महान शैवाचार्य एवं उनके कुल पुरोहित स्वामी राम जी को मिली तो वह बहुत ही प्रसन्न हो गए और कश्मीर में यह भजन गाकर नाचने लगे :

घटअ चज़ऽय गाश आव चान्ये ज्यऽनय।
जय जय जय देवकी नन्दनय।
अर्थात् हुआ प्रभात तम चला सुदूर
तेरे जन्म से छाया नूर
जय जयकार हो मेरे बाल
जय नन्दनन्दन देवकी लाल।।

प्रसन्नमुद्रा में स्वामी राम ने उसी समय भविष्यवाणी की यह बालक महान शिव भक्त बनेगा और परिपूर्ण योग से सम्पन्न होगा।

नामकरण संस्कार के दिन जब स्वामी राम जी से नाम के विषय में पूछा गया तो उन्होंने एकदम कहा कि मैं राम हूँ और वह लक्ष्मण है। इस तथ्य को आचार्य रामेश्वर झा ने भी गुरुस्तुति में निम्नलिखित श्लोक में प्रकट किया।

ज्योष्ठोऽप्यसो मद्गुरु जन्म जात
हर्षोल्लसत् विस्मृत देह भावः।
रामोऽस्यहं लक्ष्मण एष जात
इत्येव गायन सहसा नर्नत।।

अर्थात् : ये श्री राम जी वृद्ध होने पर भी मेरे गुरु के जन्म से इतने प्रसन्न हुए कि एकाएक देहभाव को भूल कर मैं राम हूँ और यह उत्पन्न हुआ बालक लक्ष्मण है गाते हुए नाचने लगे। स्वामी राम जी श्री

नारायण जू रैना के कुल पुरोहित थे और इनकी गणना कश्मीर के महान शैवाचार्यो में की जाती है।

स्वामी लक्ष्मण जू एक सोम्य सन्त थे। इनके शालीन जीवन का आंकलन करने से यह बात सिद्ध हो जाती है कि ये शैशवावस्था से ही पराशक्ति के वैभव का साक्षात्कार करने के लिए उत्सुक थे इसीलिए तीन वर्ष की अल्प आयु में अपने पूर्व संस्कारों के कारण स्वयं मिट्टी को गूंथ कर शिवलिंग बनाया करते थे और बड़ी तन्मयता के साथ उसमें फूल और जल चढ़ाते थे।

जब इन्हें राजकीय विद्यालय में पहली कक्षा में दाखिल किया गया तो वे अपने साथ अपना आसन पट भी बैठने के लिए लेते थे और उसी पर अपनी कक्षा में आखें मींच कर बैठा करते थे। एक दिन कक्षा अध्यापक के पूछने पर कि वे आँखे मीच कर क्या देखते हैं ? तो बालक लक्ष्मण ने सहज स्वभाव से उत्तर दिया कि संसार में जो सब से बड़ा है वे उसी को आँखे बन्द करके देखते हैं। इतनी अल्प आयु में इतनी बडी बड़ी बातों वाला असाधारण बालक ही हो सकता है।

पांच साल की अल्प आयु में बालक लक्ष्मण की साधना में और अधिक बदलाव आया था। वे सुबह शाम चौकड़ी मार कर बैठते थे। कभी आँखें मंदे हुए हो जमीन पर गिरते थे और कभी घबराहट के साथ चोंक उठते थे। माता पिता बालक की यह दशा देखकर घबरा गए और शैवाचार्य स्वामी राम जी के पास बालक को ले गए। वहां भी बालक लक्ष्मण जब बैठे बैठे ही नीचे को गिर गए तो स्वामी राम जी ने उन्हें परामर्श दिया कि ऐसे समय इनके सिर में थोड़ा सा मक्खन धीरे-धीरे मलना चाहिए। इससे इनका प्राण वायु स्वयं संचार करने लगेगा। इसमें भय की कोई बात नहीं क्योंकि ये पूर्व जन्म के योग भ्रष्ट हैं। परन्तु माता अरण्यमाली इस उपचार को विशेष न समझ कर स्वामी राम जी से पुनः प्रार्थना करने लगी कि भगवन् कि क्या इस उपचार मात्र से मेरा लाल ठीक

हो जाएगा ? स्वामी राम जी पुनः हंसते हुए उत्तर दिया कि आपके लाल को कोई विशेष रोग नहीं है। भगवान् शंकर से प्रार्थना करो कि जो बीमारी आप के लाल को लगी है उसी बीमारी से स्वामी राम सदा ग्रस्त रहें।

9 वर्ष की आयु में इनका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ और इस संस्कार के पश्चात् इनकी साधना एवं जाप सुबह शाम निबार्ध रुप से चलने लगा और ये साधना की एक के बाद एक सीढी पार करते गए।

13 वर्ष की आयु में श्री नारायण जू रैणा ने अपनी पुत्र के विवाह के लिए प्रयत्न शुरु किए परन्तु स्वामी लक्ष्मण जू ने अपने घर वालों को स्पष्ट शब्दों में कहा कि हम आजन्म ब्रहमचारी बने रहेंगे अतः विवाह का प्रयत्न करना व्यर्थ है। यदि आप हमें विवाह के लिए बाध्य करेगें तो हम घर छोड़ कर चले जाएगें।

अब स्वामी लक्ष्मण जी संसारिक रंग में रंगनें के बजाय साधना रंग में स्वामी राम जी की देखरेख में अधिक रंगने लगे। अपने अन्तिम समय को निकट देखकर स्वामी राम जी बालक लक्ष्मण को अपने प्रधान शिष्य महताबकाक को सौंप कर अपना अधूरा कार्य पूरा किया और स्वयं वे सन् 1915 में मार्ग कृष्ण पक्ष की चर्तुदशी को शैवधाम को सिधारे। स्वामी महताब काक जी बाल-ब्रह्मचारी और वैराग्यभाव से सुशोभित थे। इनकी ही शिक्षा दीक्षा में अभ्यास परायण रहकर स्वामी लक्ष्मण जू शुक्लपक्ष की चन्द्रकला की भांति दिन प्रतिदिन वृध्दि पाकर पूर्णिमा के सुधारकर बन गए। पिता श्री नारायण जू रैना की बीमारी के कारण स्वामी लक्ष्मण जू को मिडल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् पाठशाला जाना छोड़ना पड़ा और पिता श्री के कार्य में सहायता करने लगे। परन्तु वहां भी वे अपना अभ्यास निर्बाध रूप से करते रहे। बाद में उन्होंने संस्कृत भाषा साहित्य संस्कृत व्याकरण एवं शैव शास्त्रों का यथोचित ज्ञान कश्मीर रिसर्च कार्यालय के मुख्य पंडित श्री महेश्वर जू

राज़दान से प्राप्त किया। इस प्रकार दर्शन के इस क्षेत्र में महारथ प्राप्त करके स्वामी लक्ष्मण जू प्रधान शैवाचार्यों में गिने जाने लगे तथा इनकी विद्वता की धाक देश विदेश में जमने लगी जिसके परिणाम स्वरूप न केवल देशीय विद्धानों का तांता अपितु विदेशी विद्धान भी अपनी ज्ञान वृद्धि के लिए तथा अपने भिन्न भिन्न कश्मीर शैव दर्शन सम्बन्धित शोध पत्रों की पूर्ति के लिए इनके आश्रम पर पधारने लगे। इनमें फ्रांस की डा0 सिलबर्न, कलीफार्निया के जान हवेग आदि प्रमुख है। देशीय विद्धानों में डा0 जयदेव सिंह ने स्वामी लक्ष्मण जू की छत्रछाया में बैठ कर प्रत्यभिज्ञ हृदयम् और परात्रिंशिका जैसे आगम ग्रन्थों का आंगल भाषा में विस्तृत अनुवाद करके दार्शनिक क्षेत्र को चौंकाया। स्वामी लक्ष्मण जू ने स्वयं भी शैव दर्शन के गूढ रहस्यों को जन मानस तक पहुंचाने के लिए अथक प्रयास किया। अतः उन्होंने तो कई ग्रन्थों की टीकाएं लिखी तथा कई ग्रन्थों पर भाष्य भी लिखें जिनमें श्री उत्पल देव की शिवस्तोत्रावली, वसुगुप्त के शिसूत्र, श्री धर्माचार्य की श्री पंचस्तवी, क्षेम राज की पराप्रावेशिका, श्री साम्बपंचाशिका आदि। इनके अतिरिक्त उन्होंने स्वयं भी शैवशास्त्रों पर कुछ पुस्तकें लिखी जिनमें त्रिक शास्त्र रहस्य प्रक्रिया कश्मीर शैवदर्शन में साधना और यम नियम, कुण्डलणी विज्ञान रहस्य, श्री अमृतेश्वर भैरव महिम्नस्तोत्रम, Kashmir Shaivism, Self Realization of Kashmir Shaivism आदि। प्राचीन शैव ग्रन्थों पर टीकाएं एवं भाष्य लिखने की अवश्यकता पर बल देते हुए स्वामी जी ने श्री साम्बपत्राशिका की भूमिका में स्वयं लिखा है कि :

संस्कृत टीकाओं को समझ सकने वाले तथा संस्कृत जानने वाले लोगों की संख्या ही आजकल कितनी है। अतः प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों के अनुवाद किसी ऐसी देश भाषा में प्रकाशित करने से लोगों का उपकार हो सकता है जिसे वे अधिक से अधिक संख्या में समझ सके। यदि हम चाहते हैं कि संस्कृत पुस्तकों और शास्त्रों का अध्ययन अधिक से अधिक लोग कर सके तो इस बात की अत्यन्त आवश्यकता है कि

संस्कृत साहित्य रूपी बहुमूल्य कोष का द्वार सर्व साधारण के लिए खुला रखने की चेष्टा की जाए और हिन्दी टीका रुपिणी कुंजी से इसे खोल कर लाभ उठाने का उसे सुअवसर दिया जाए।

स्वामी लक्ष्मण जू साधरण जीवन होकर अलौकिक व्यक्तित्व से परिपूर्ण थे। इनके इस असाधारण व्यक्तित्व के सामने किसी की एक भी नहीं चलती थी। शास्त्र प्रसिद्ध चौंसठ कलाओं में से कोई भी कला ऐसी नही थी जिसके परखी होने का गौरव इन्हें नहीं था। पर भैरव की इन पर इतनी असीम कृपा थी कि कोई भी विशेषज्ञ इनके सामने अपनी सर्वज्ञता का दावा नहीं कर सकता था। इनका व्याख्या करने का ढंग ही अनूठा था। पाषाण बुद्धिवाला व्यक्ति भी इनकी शब्दार्थ उष्मा से विच्छिन्न होकर विगलित हो उठता था। अपने अनुभव जन्म ज्ञान के आधार पर शब्दों की नवीनतम व्याख्या देकर साधकों को अचम्भे में डालते थे। वास्तव में अहर्निश साधना में लीन होने के कारण क्षण-क्षण के पश्चात् ही उनमें नीवनता आती थी।

"तत्वज्ञानाम् तृणं शास्त्रम्" अर्थात् त्त्व ज्ञानियों के लिए शास्त्र ज्ञान तिनके के समान है। इस मर्म को पूरी तरह से जानते हुए भी स्वामी लक्ष्मण जू लोक मर्यादा का पालन करने के लिए भगवान श्री राम की तरह साधारण प्राणी का सा आचरण करते थे। लोक मर्यादा किसी भी प्रकार से भंग न हो इसका उन्हें विशेष ध्यान था। भक्ति की उन्मत्तावस्था में विभोर होकर कभी हंसते थे और कभी आवेश में आकर अश्रुधारा से गुरुचरणों पर लगी भौतिक धूल को सलीके से पोंछते थे। कभी इनकी भावगंगा उत्पलदेव से टक्कर लेती थी और कभी आचार्य अभिनवगुप्त की दार्शनिक धारा को लहलहाती थी। त्याग और वैराग्य से जीवन को सुज्जल बनाकर ये आदर्श महापुरुष सबों के लिए आदर्श बनकर अपना जीवनयापन करते थे। अपने भक्तों की भक्ति से भगवत्स्वरुप बने हुए श्री लक्ष्मण जू समय समय पर भक्तों को कर्तव्य अकर्तव्य की

ओर सचेत करते थे। स्वामी जी लौकिक या अलौकिक क्रिया कलापों के सच्चे पारखी थे। निर्माण आदि कार्यो में बड़े-बड़े इन्जीनियरों से भी अधिक अनुभवी थे। बाग बगीचों की देखबाल में लगे कुशल मालियों को भी हाथ पकड़ पकड़ कर पौधों की सुरक्षा का काम सिखाते थे। जमीनदारी का काम इतने सलीके से करते थे कि लगता था कि जमीदारी इनका जन्मजात व्यवसाय है।

स्वामी लक्ष्मण जी सदा अपने भक्तों को आगामी विपत्तियों के विषय में सचेत करते थे। कश्मीर में आतंकवाद के फैलने से दो वर्ष पूर्व ही स्वामी लक्ष्मण जू ने आने वाले उपद्रव की ओर इशारा किया था तथा इस उपद्रव से बचने के तौर तरीके भी बताए थे। अक्टूबर 1984 में जब श्रीमती इन्द्रा जी इनके दर्शनों के लिए ईशबर निशात आश्रम में आई थी तो स्वामी जी ने श्रीमती इन्द्राजी को इस बात से सचेत किया था कि आने वाला समय आप के लिए ठीक नहीं है और अपनी सुरक्षा तंत्र को और सुदृढ़ करने की प्रार्थना भी की थी।

स्वामी लक्ष्मण जू को केवल दो बातों से असीम प्रसन्नता होती थी। एक किसी संस्कृत विद्वान को देखने से और दूसरी किसी भी शाकाहारी व्यक्ति से 1 सन् 1984 जब आश्रम के अहाते में नया सत्संग भवन बन रहा था तो स्वामी जी अतीव व्यस्त रहते थे। एक दिन डा0 बलजि नाथ पण्डित के साथ एक प्रतिष्ठित संस्कृत विद्वान श्री मुरलीधर पाण्डेय जी स्वामी जी से मिलने आए। डा0 बलजी नाथ ने स्वामी जी से कहा कि कोई व्यक्ति आप से मिलना चाहते है तो स्वामी जी ने उत्तर दिया कि निर्माण कार्य में अति व्यस्तता के कारण इस समय मिलना असम्भव है। परन्तु जब डा0 बलजी नाथ ने इस प्रतिष्ठित विद्वान का परिचय दिया तो उन्होंने अपना सारा कार्य कलाप वहीं छोड़ कर उनसे मिलने की उत्सुकता दिखाई। और उनके पास जल्दी आ गए तथा गले लगा कर उनका स्वागत किया। स्वामी लक्ष्मण जी केवल

शाकाहारी लोगों को ही गुरुमंत्र देते थे। इनका सत्संग का रसापान करने के लिए केवल हिन्दु लोग ही नहीं आते थे अपितु मुस्लिम तथा सिख धर्म से सम्बन्ध रखने वाले लोग भी इनके सत्संगों में आया करते थे। क्योंकि शैवदर्शन कोई विशेष धर्म न होकर एक ऐसा साधन है जो सर्वजन साध्य है। यह किसी विशेष धर्म के लिए नहीं बना है। विशेष धर्म, वर्ण, जाति और देश के लिए इसकी उपादेयता न होकर संसार के प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह ग्राह्य है। स्वामी लक्ष्मण जू हर रविवार को अपने अमृतमय सत्संगी से लोगों को आनन्दित करते थे। इस समय भी इनके तीनों आश्रमों ईश्बर निशात श्रीनगर, महेन्द्र नगर जम्मू और सरिता विहार नई दिल्ली में भी हर रविवार को सत्संग किया जाता है और इनकी विचारधारा को आम जनता तक पहुंचाने के लिए प्रयत्न किया जाता है। यह महान् शैवाचार्य 21 सितम्बर 1991 को इस संसार को छोड कर सदा के लिए शिवधाम को सिधारे।

शास्त्री जी कहते थे :

अ. हर कश्मीरी घर में बोलचाल कश्मीरी भाषा में होनी चाहिए।

आ. कश्मीर को शारदा पीठ कहते हैं अतः शारदा लिपि सीखिये। शारदा लिपि हमारे पूवर्जों की धरोहर है।

इ. जन्मदिन हो या कोई शुभ त्यौहार, पीले चावल (तहर) अवश्य बनायें यह कश्मीरियों की एक पहचान है।

ई. बड़ों को हाथ जोड़ कर प्रणाम करें।

उ. हर कष्ट से बचने का उपाय माता पिता की सेवा।

धनु तु ध्यार

प्यारे हताश

अॅस्य छि कामयाब ज़िन्दगी बसर करान या नाकाम ज़िन्दगी। अॅस्य छा ब्रोंह ब्रोंह पकान किनु पथ-पथ गछ़ान, यि छु सोरुय अकिस इन्सान सुंदिस सोंचनस प्यठ आसान। इन्सानन युस नज़रयि पॅनुन्य् ज़िन्दगी बनावनु बापथ थोवमुत या बनोवमुत आसान छु, तमि बापथ छु सु स्यठाह परिश्रम ति करान तु पानस मंज़ कॉबलियत ति पॉदु करान। केंह मकसद प्रावनु बापथ छु इन्सान दुनियाहस मन्ज़ कामयॉबी हॉसिल करनुच कूशिश करान। हरगाह इन्सान पननि खॉत्र सफलता यछान छु त्यलि गछ़ि तमिस मन्ज़ परनु-लेखनुक मादु आसुन, युथ ज़ि सु पनुन पान नेशनॉविथ हेकि। जिन्दगी बॅन्यस कामयाब तु कामरान। सफलता या असफलता छि इन्सानस पनुन्यन अथन मन्ज़। अमि बापथ ति गछि इन्सानस अख मजबूत लक्ष्य ब्रोंह कनि आसुन। तमी सुत्य हेकि सु पनुन आसुन सफल बनॉविथ। यिमु सारेयि कथु छे सिद्धांतन प्यठ आध ारित आसान।

यिम लूख धन कमावनस मन्ज़ आवुरय रोज़ान छि तिम छिनु ज़िन्दगी हुन्द स्वख प्रॉविथ हेकान। तिमन छे धनु तु ध्यार कमावुनुच चूरु कल हमेशु सतावान रोज़ान। असली धनु छु विद्दायि हुन्द धनु।

हेमकुंड साहब

प्यारे हताश

उत्तराखंडस मंज़ छु हेमकुंड साहिब सिखन तु हेन्देयन हुन्द अख पवित्र देवस्थान। समुद्रतलु प्यठु करीब 4329 मीटर थज़रस प्यठ छि यि जाय लोकपाल सरोवर किस बॅठिस प्यठ। च़ोपॉरय् छि अथु जायि बाल तु वन येमि सुत्य यि स्थान स्यठाह लूबवुन तु शूबवुन बासान छु। बासान छु ज़ि प्रकृति छै यि जाय पानु गॅरमुच़। ट्रैकिंग करन वाल्यन

प्रकाश

हुन्दि खॉत्र् छु यि इलाकु मॉरय मोन्द तु दिलन रन्ज़ुनावन वोल।

वादियन मन्ज़बाग यि मशहूर सिख गुरद्वारु छु दुहय भक्तव सुत्य बरिथ आसान। अति छु भगवान राम सॅन्दिस ल्वकटिस बॉय लक्ष्मण सुन्द अख मंदिर ति, अमि किन्यू छि लूख ओर ति यिवान गछ़ान। यि स्थान छु स्यठाह पूजनीय माननु यिवान। हेमकुंडकिस बठिस प्यठ आसनु किन्य् छु यि मंदिर सॉरयसुय संसारस मन्ज़ प्रसिद्ध। तिक्याज़ि दुनियाहस मंज़ छि लक्ष्मन जीयिन मंदिर स्यठाह कम।

हेमकुड सॉबस ॲदंय पॅखय् छि शीनु बाल नज़रि गछान। अपॉरय् छै अख नदी ति वसान येम्मुक पोन्य छु स्यठाह साफ तु शफाफ आसान। शीनु चादर तु निमर्ल पोन्य् छु हाथी पर्वत तु सप्तऋषि बालु थैन्गय छि हेमकुंड झीलस हमेशि बरिथ थवान। अमि झीलु मन्ज़ युस पोन्य वसान छु तथ छि हेम गंगा वनान। पवित्र ग्रंथ साहिबस मन्ज़ छु वननु आमुत ज़ि सिखन हॅदिंस दहिमिस गुरु श्री गुरु गोविंद सिंह जीयस छु हेमकुंड बठिस प्यठ ध्यानस मंज रूज़िथ ध्यान तु ज्ञान प्राप्त सपुदमुत।

हेमकुंड साहिब गुरुद्वारा छु तॅथ्य जायि प्यठ युतिनस श्री गुरु गोविंद सिंह जीयस तपस्या करिथ ज्ञान प्राप्त सपुदमुत छु। अथ मानितायि प्यठ विश्वास करिथ छि सासुबॅदय् लूख ओर दर्शन करनि यिवान।

हेमकुंडुक ज़िकिर छु रामायणस मन्ज़ ति मेलान मान्यता छि यि ज़ि येलि राम तु रावनस जंग सपुद तु लक्ष्मण तु मेघनाथ सुदिंय् हॅस्य येलि ज़ख्मी गयि पतु कॅर तिमव ॲथ्य बठिस प्यठ साधना तु तिम गयि ठीक। लक्ष्मण मंदिर ति छु तती अज़ ति। तती कॅर तिमव साधना तु आख अध यात्म ज्ञान तु गयि ठीक।

वैली ऑफ फ्लावर्स छे अति प्यठु चोर किलोमीटर्स दूर। अति छि विभिन्न प्रजातियन हॅदि पोश 1982 मन्ज़ आयि यि नेशनल पार्क घोषित करनु। अज़ छि यि पार्क दुनियाहस मनज़ मशहूर।

हेमकुंड साहिबुक नज़दीकी रेलवे सिटेशन छु ऋषिकेश। अति प्यठ छु गोंविद घाटस ताम यात्री बसि मन्ज़ गछ़िथ हेकान। तति प्यठ़ छि 19 किलोमीटर ट्रैकिंग प्यवान करुन्य्।

हेमकुंड साहिबु छि सर्दी आसान। जूनु प्यठ अक्तूबरस ताम छु यात्री ओर गछ़िथ हेकान। ति क्याज़ि अति छि सर्दी आसान।

अतियुक तापमान छु माइनस 4 डिग्री ताम वसान। नवम्बर त दिसम्बरस मन्ज़ छु अति शीन प्यान शुरु स्पदान।

यि जाय छे वुछिन्य लायक ति तु पवित्र ति।

मूर्ख मनुशो सत्त कर्म कर

प्यारे हताश

यमु हेरि खसख व्योंथी थरु थर
मूर्ख मनुशो सत्त कर्म कर
तति मा बोज़ान वल तय वर
मूर्ख मनुशो सत्त कर्म कर।।
भक्ती मन्ज़ गुपिथ अथाह ज्ञान
परज़ुनावुन तगी त्यलि स्वर पान
प्रातः सायं हर हर पर
मूर्ख मनुशो सत्त कर्म कर।।
केंहनु मनज़य क्याह ताम द्राव
तॅथ्य वनान छी भक्ती भाव
ख्यनु ख्यनु अॅन्दरी दयि नाव स्वर
मूर्ख मनुशो सत्त कर्म कर।।
अंग ऑशनाव मा नेरान सोरय

संसॉरय् बुथ्य छी हति प्रकारय्
दरुखय अैथ्य विजि वावस दर
मूर्ख मनुशो सत्त कर्म कर।।
थज़ु थज़ु मन्दोरि येथ्य् डोलन
सोनचे कहवचि तति तोलन
कर्मक्य धर्मक्य अक्षर पर
मूर्ख मनुशो सत्त कर्म कर।।
साद सन्तन हृन्ज़ संगत थाव
भ्रम अज्ञानुक मद फुटराव
मनकिस मंदरस वैथ्य थव बर
मूर्ख मनुशो सत्त कर्म कर।।
ओम नाव अख पर कासी दुय
पतु मा फोरी बुय छुस बुय
तति छिनु तोलान माल तु ज़र
मूर्ख मनुशो सत्त कर्म कर।।
योर आख ज़न्मस दोह तारय
छुय गछुन वापस येमि संसारय
सोन छुय सागर अपोर तर
मूर्ख मनुशो सत्त कर्म कर।।
आडम्बर छुय द्रुस संसार
'सू हम सू' ती मनि चु गार
नतु ज़िन्द ज़ुवु सुय जल जल मर
मूर्ख मनुशो सत्त कर्म कर।।

प्रेमनाथ शास्त्री

मोहन लाल आश

कश्मीर की पुन्य भूमी विजेश्वर में जन्म लेने वाला ज्योतिष फिलास्फर विजेश्वर के 'काह काह पल' की तारीख को जीवन दान देने वाला। कश्मीर से जलावतन हुए आमिलों, फाज़िलों, विद्यागरों, शास्त्र अधिष्टाओं को रेगिस्तान की तप्ती धूप में सहारा देने वाला, प्रेम नाथ शास्त्री बीस्वी सदी का युग पुरुष था।

कश्मीर के असली बाशंदों को जो पांच हज़ार साल पहले नील राजा के दरबार मे दरबारी रह चुके है जो बडशाह के जमाने में कश्मीरयत के खाब को शरमन्दा ताबीर करने वाले थे जो नुन्द ऋषि के ऋषि नामों को तहरीर करने वाले थे, जो हिन्दू मुसलिम बरादरी के मतवाले थे, जिन्होंने कभी किसी मुसलमान को गज़न्द नही पहुंचाया, हमसायों को अपने रिश्तोदारों से करीब समझने वाला। अयूब खान के ToPac 8 के तहत रातों रात मुखबिर बना, देश द्रोही बना, कश्मीरियत के तसुवर को गढे में दुन करने वाला, हिन्दोस्तान का एजन्ट ओर पोलिस अहलिकारों का खबर रसान और दिल्ली के हुकुमरानों का मुखबिर, दरवाज़ों पर लगे इशतिहारों पर, अपने मोरुसी वतन को छोडने के लिए कहा गया, वरना नताइज भुगतने के लिए तैयार रहो, इस तरह ज्ञयान वालों, बॉथ मानों, विद्ययादरों ज्योतिष फिलास्फरों और समाजी दानिशवरों का यह कौम 5000 साल के बाद न दर का रहा न दीवार का।

इस अंधेरी रात में जहां घटाओप अंधेरा चारों तरफ छाया था आसमान काले बादलों से घिरा हुआ था, हाथ को हाथ सजाई नहीं दे रहा था। गर्मी करबलाकी, हवा ढलने का नाम नहीं, चारों तरफ हाहाकार, बच्चों का रोना बिल्कना, माताओं का विलाप, किसी को कुछ नहीं सूझ रहा था। जाये तो जायें कहा, करें तो क्या करें। चारों तरफ हर एक के सिर

पर मोत का साया मंडला रहा था। इसी भयानक सूरतहाल में गोल गुजराल के इलाके से सूरज ने काली घटा के अंदर से चेहरा निकाला तो सारा इलाका जय जय कार की गूंज से महक उठा, यह चमकता चेहरा हमारे महान अध्यात्मशक्ति श्री प्रेम नाथ शास्त्री का था।

शास्त्री जी ने मायूस दिलों में उमीद की किरन जगाई, होसला दिया। श्री रामचन्द्र जी के बनवास का हवाला देकर लाखों पिजमुर्दा लोगों के दिलों में उमीद और आशा की किरन जगाई। गीता भवन के विशाल आंगन में भाषण देते हुए फरमाया "कश्मीरी पंडितों की तारीख, तमदुन, आत्मा की शुद्धी देव प्रसारद के होते कश्मीरी एकता के स्तम्भ माने जाने वाले कश्मीरी पंडित, राजा नील के वनशवली से तालुक रखने वाले, ललेश्वरी के सन्तान, नुन्द ऋषि के मानने वाले, बुधि जीवी, ज्ञयानी पुरुष एक रात में मुखबिर, देश द्रोही और कुरीति का पालना करने वाले हिन्दोस्तानी एजन्ट कैसे बने। यह आपको माता क्षीर भवानी का इमतिहान आया है। इस में देखना है आप कैसे खरे उतरते है। आप ने अपने संस्कारों को भूल डाला था, अध्यात्मवाद से दूर होते जा रहे थे। इसीलिए माता शेरांवाली और अमरनाथ स्वामी ने आपको इमतिहान में डाला है। संस्कारों का दामन पकडने वाले और माता क्षीर भवानी और भोले नाथ की याद को समाधी की शकल में अपनाये। मैं आपके साथ हूँ। मैं गीता जी, शिव महमना सूत्रम, कर्म कांड पूजा विधी, जन्म दिन पूजा, शिव रात्री पूजा सब आपके घरों में पहुंचा रहा हूं। दुख की घडी में इश्वर का दामन थामिये आपके सब दुख दूर हो जायेंगे।

मगर जिस वक्त यह सारा अष्टांग मार्ग खत्म होने के जैसा कि पहले कहा जा चुका है। कौम ने बेजबिहाडे के प्रेम नाथ शास्त्री को ताजपूशी के तख्त पर बिठा दिया। इसी को कहते हैं अललूअज़म क्या नहीं करते, कोह से दरया बहाते हैं।

शास्त्री जी का यह एलान कितनी दानिशमन्दी और फहम पर मुबनी था कि मैं सारा कर्म कांड घर घर पर पहुंचा दोगा। ऐसा नही होगा कि आपकी उमीदों के बांद मिटने पायें, और शास्त्री जी ने ऐसा करके दिखाया और कहा कि माता भवानी के संन्तानों को आज साबित कदम रहने का इमहितान है। इसी को कहेंगे हिस आगही और दुनियादारी का अमल।

शास्त्री जी और में एक ही कसबे यानि बिजबिहाडा में पैदा हुए है। वह बचपन मेमं ही महत्मा बुध की तरह अजीब गरीब लक्षण रखते थे। यानि जब आम लडके खेलते थे तो वह बाग के किसी पेड के नीचे आकाश की ओर नज़रे टिकाए बेठते रहते।

उन के पास बहुत सी गायें थी, दूध, दही और लस्सी उनके घर में सालभर दसतयाब हुआ करती थी। लाला जी (ज्योतिषी आफताब राम शर्मा) के कमरे में दाखल होते ही लस्सी का गिलास पेश किया जाता था। शास्त्री जी भी इसी कमरे में बैठकर जातक (जन्म पत्री) की गन्ना सिलेट पर किया करते थे। वेद, पुरान, और शास्त्र का मताला करते थे। जो समय बच जाता उस दोरान सिर्फ फलसफे का मुताला करते। अकसर जरमन फिलास्फरों की किताबें जिन्होंने वेदों का तरजमा किया है। उनकी यादाशत गेर मामूली थी। जिस समाय परवचन देते थे। लगता था जैसे उनके गलें में सरस्वती ने वास किया है। हवालों पर हवाले देते थे। जिस से बडे बडे अदीब दानिश्वर, कलमकार और शास्त्र द्ययानो ओगुंश्त ब दंदान रहते थे।

मेरे साथ शास्त्री जी के करीबी तालुकात थे, कई बातें थी जिन पर में उनके साथ इतिफाक नहीं करता था। तो मैं कभी खशम के साथ उनको जवाब भी देता था। लेकिन मेरी यादाशत में ऐसा कोई मोका नहीं जब मैं ने शास्त्री जी के मुंह पर गुस्सा देखा हो, बलकि एक मसीन मुस्कराहट तारी करके मुझे तुममइन करते और ऐसा भी कोई

मोका नहीं आया जब मैं शास्त्री जी के जवाबों से मुतमइन न हुआ, मैं यह भी बतादूं कि वह मिज़ाज के बहुत तेज़ थे। मगर शास्त्रों का अर्थ करते समय खन्दा पेशानी से तारीफों के सुन्हरे कंगन पहनने का शोक किस को नहीं होता। मुझें लगता है कि जितनी तारीफें और दस्तार बनदयिां उनकी की गई है और किसी दानिश्वर के मुकदर में नही आई होंगी।

मैं मुखत्सर में यह कहों कि पंडित कौम ने जैसे आतशी अंधेरों और मार कांडों में प्रेम नाथ शास्त्री को हाथों में शास्त्रों और संस्कारों का कल्प वृक्ष लिये पाया। उनके पैर चूमे और वह भी जैसे इस नापुरसान कौम का जोश और वलवला देखकर खुश हुए। उन की आवाज जब बडे बडे इजलासों में लाउड स्पीकरों पर गूजंती थी, सुनने वाले बज्द में आजाते थे।

प्रेम नाथ शास्त्री वितस्ता के आशिक थे। एक बार मैं ने उन से पूछा इसकी इतनी अहिमयत क्या है कि आप इस पर नज़रें टिकाये बैठते है? बोले वितस्ता ने ही हमारी संस्कृति को जन्म दिया है, जब पांडओं का मंझला भाई भीमसेन, बागबट्ट को डूंडने विजेश्वर पहुंचा उन ने पहले वितस्ता को ही डंडवत प्रणाम किया। मेरी तरफ मुखातिब होकर बोले, मैं कई दिनों तक व्यथ वोतुर में बैठता हूँ आप से क्या कहूं मैं वहां रात भर कौन से तिलस्मात देखता हूँ। वितस्ता के किनारे पर ही हमारी तहजीब के स्तून खडे है जो माता लल्लीश्वरी, नुन्द ऋषी वागबट्ट, शारिका देवी, शीतलपुत्री और शारदा देवी ने खडे किए है। देवक घाट पर ही साधना का फल हासिल होता है।

मेरे गुरु देव (आफताब काक) सवेरे एक घंटे तक वितस्ता की पूजा अरचना करते थे, मैं महात्मा ब्रंगस ऋषी की पूजा करता हूँ। जिस ने कश्मीर का अध्यतमवाद पहली बार कलमबन्द किया।

यह वाका दिलचस्पी से खाली नहीं, मुझे अपने लडके का यगनोपवीत

संस्कार करना था। घरवाली ने मुझे कहा कि मुझे इस शुभ दिन पर सिर्फ प्रेम नाथ शास्त्री चंद्र तारक होना चाहिये। यह माइग्रेशन से बहुत पहले का वाका है। शास्त्री जी गोल गुजराल के मकान में रहते थे। इस इलाके में न कश्मीरी पंडित रहते थे न जम्मू के हिन्दू। शास्त्री जी के इस बनवास का मतलब नहीं समझ सका। आखिर मैं उनके पास पहुंचा। काफी बातचीत हुई। मैं ने कहा, शास्त्री जी आप ने अपने जीवन में बहुत दूर रस फैसलें लिए है।। मगर यह तमाश में समझ न सका। इस वीराने में आपको मकान बनाने की क्या जरूरत थी। तो कहने लगे देखो मोहन जी जो में कर रहा हूँ। वाख वाख दनी भैरवी। ऐसा ही हुआ। जो भविषवाणी इस पुन्य आत्मा ने पचीस साल पहले की थी। वही हम को १९९० ई में देखना पडा।

शास्त्री जी ऊचे कद के गुरु भक्त थे। वह रात्री का भोज करने से पहले अपने गुरुजी, पिता जी के चरणों में सादर प्रणाम करते। फिर कामदीनों का रख रखाव देखते। फिर घर वालों से दिन भर के वाकात सुनते। जब जाके रात का खाना खाते थे। खाना इतना कम खाते थे कि अगर दस साल के बच्चे को भी वह खाना दिया जाता वह भी भूखा ही रहता। उनके स्वर्ग पदारने से मैं ने जातीतोर एक हमदर्द प्यार करने वाला, रफीक और शफीक उसताद खोया है।

(नोट : यह लेख स्व0 मोहन लाल जी आश का लिखा हुआ है जिस प्रकार उन्होंने लिखा था उन के ही शब्दों में छापा गया है यह हिन्दी, उर्दू को मिला कर लिखा गया है।)

विस्थापन के प्रभाव से अछूते नहीं रहे कश्मीरी पण्डितों के त्योहार

डा. महाराजकृष्ण भरत

14–15 अक्तूबर 2017 को जम्मू स्थित राजकमल गार्डन के परिसर में कश्मीरी पण्डितों की पुरातन संस्कृति एवं परम्पराओं पर केंद्रित एक धार्मिक सांस्कृतिक सम्मेलन का आयोजन किया गया था। पंडित प्रेम नाथ शास्त्री सांस्कृतिक शोध संस्थान द्वारा आयोज़ित इस सम्मेलन के प्रबंधक थे – पं० ओंकार नाथ शास्त्री जी, जो शोध संस्थान के संस्थापक अध्यक्ष भी हैं। मुझे भी इस सम्मेलन में आलेख पढ़ने व किसी सत्र के संचालन की जिम्मेदारी सौंपी गई थी। आज इस सम्मेलन का पुनः स्मरण करना, एक सुखद अनुभूति से भर देता है। इस आयोजन का मूल बिंदू यही था कि क्या कश्मीरी पण्डित अपनी संस्कृति, संस्कारों, पर्वों, त्योहारों एवं धार्मिक रीति रिवाजों के मूल को संरक्षित रख पाएंगे या फिर काल चक्र के बदलते घटनाक्रम के कारण उनमें कुछ परिवर्तन आता रहेगा। इन्हीं प्रश्नों का उत्तर खोजने के लिए इस सम्मेलन में विद्वानों के मध्य गहन–चिंतन मनन हुआ।

यह बात सर्वमान्य थी कि कश्मीरी पण्डित आज भी अपनी जड़ों, अपनी सांस्कृतिक विरासत से विच्छिन्न तो नहीं हुए हैं लेकिन बदलती हुई परिस्थितियों, वातावरण और जन्मभूमि के स्पर्श के छिन्न जाने के कारण कुछ परिवर्तन स्वतः ही हो गए। कश्मीरी पण्डित अपने मूल को संरक्षित रखने के लिए आज भी संघर्षरत हैं। संस्कृति – त्योहार, पर्व तो अपने मूल स्वरूप का त्याग कभी नहीं कर सकते, केवल उनके मनाने के ढंग में समयानुकूल कुछ परिवर्तन / संशोधन होते रहते हैं।

कश्मीर का हिन्दू यानि कश्मीरी पण्डित सहस्रवर्षों से कश्मीर का मूल निवासी रहा है। जब उस के भाग्य में 'निष्कासन', 'निर्वासन' और 'विस्थापन' के शब्दों से जूझना लिखा था, इन शब्दों के अंतर्गत छिपे अर्थ और भाव को भोगना लिखा था, तो तब इस बात की आशा कैसे की जा सकती थी कि जब महाशिवरात्रि का पर्व आएगा, तो कुम्हार मिट्‌टी के बने हुए 'वटुक परिवार' को प्रतीकात्मक रूप से आदर और सम्मान के साथ प्रत्येक कश्मीरी पण्डित घर तक ले आएगा, परिवार में हर्षोल्लास का वातावरण छा जाएगा, बच्चे हेरथ खर्च (इस त्योहार पर उपहार स्वरूप दी जाने वाली भेंट) की कामना करेंगे, अधिकांश सदस्य खेलने के लिए फिरन की जेबें कौड़ियों से भर–भर कर रखेंगे, और शिवरात्रि त्योहार के समापन के बाद रिश्ते–नातों में प्रसाद बांटने की होड़ लग जाएगी।

जन्मभूमि से कोसों दूर रहने से यह वातावरण भी कहीं खो गया। आज शायद उस कुम्हार ने भी अपना मार्ग या कार्य बदल दिया होगा, कौड़ियों से खेलने की प्रथा ही विस्मृत हो गई। पूजा अर्चना करने के लिए प्रत्येक निवास तक पहुंचने वाले कुलगुरु का स्थान समय की विवशता के कारण आडियो/वीडियो कैसेटों तथा अब सोशल मीडिया ने ले लिया। 'हेरथ' (महाशिवरात्रि) के प्रसाद को बांटने के प्रचलन में रुखाई सी आ गई। यह भी समय का सच है कि पहले कश्मीर में हर घर तक पहुंचने की पहुंच थी, पर विस्थापन की त्रासदी के बाद पैतृक गांव / शहर की गलियां मुहल्लों और खेत–खलिहानों ने अपने–अपने पत्ते बदल दिए हैं। इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि यह प्रसाद वितरण ही हमारे संबंधों की गहरी पैठ थी, जिसे अब हम पूरी ऊर्जा के साथ निभा नहीं पा रहे हैं। उल्लेखनीय है कि महाशिवरात्रि का पर्व तो कश्मीरी पण्डितों के विशेष पर्वों में से एक है।

विस्थापन से पूर्व पूरे रस एवं चाव के साथ माटी की गंध और

संस्कृति की सुगंध को आत्मसात् करते हुए कश्मीरी पण्डित अपनी परम्पराओं का निर्वहन करते थे, और इसमें भी एक विशेष बात यह थी कि घर में आयु से बड़े सदस्य ही परिवार का मार्गदर्शन करते थे। सभी सदस्य त्योहारों/पर्वों का आनंद लेते थे। ये सांस्कृतिक पर्व ही है जो परिवार और समाज को समीप लाने, मिल–बैठकर सहभागी बनने का शुभ अवसर प्रदान करते थे, पर आज जब न जन्मभूमि की महक रही, न संस्कृति की फुहार, न बुजर्गों का सतत वरदहस्त, या फिर उनके साथ सतत् चर्चा, तो कैसे लौट आएंगे वे दिन। यह केवल एक समुदाय का निष्क्रमण ही नहीं है वरन उस के साथ सांस्कृतिक विरासत, परम्पराओं का भी विस्थापन है।

आज सबसे ज्वलंत और गंभीर प्रश्न यही है कि कश्मीरी पण्डित अपनी समृद्धशाली परम्पराओं, विशिष्ट संस्कृति के ताने–बाने को कैसे मूल रूप में बचा पाएंगे? क्या उनमें बदलती परिस्थिति, वातावरण, स्थान परिवर्तन के साथ–साथ दिनचर्या के कारण भी बदलाव तो नहीं आए? कुछ बदलाव परिस्थिति जन्य भी हो सकते हैं और कुछ तटस्थता के कारण भी, जो घोर चिंता का विषय है। जब समुदाय के समक्ष अस्तित्व एवं अस्मितां का गहराता संकट हो, तो विस्थापन–दर–विस्थापन एक विवशता बन जाती है। घाटी से आतंकवाद एवं अलगाववाद के कारण निष्कासन हुआ वहीं शरणार्थी बस्तियों से आर्थिक एवं शिक्षाग्रहण करने के कारण भी एक और विस्थापन हुआ। बहुधा कश्मीरी पण्डित समुदाय के संयुक्त परिवार छोटी–छोटी इकाइयों में बंट गए और पारिवारिक इकाइयां एकल परिवार हो गए। दूरियां बढ़ गईं, चाहे मीलों की या फिर दिलों की। आज जीवन की आपाधापी में जीवन जीने की शैली ही बदल गई। व्यक्ति अपने में ही सिमटा हुआ दिखाई दे रहा है, जीवन में स्थिरता आ गई है। आत्मसंतोष कहीं खो गया है।

आज के वातावरण में जब हमारे पास 'डिजिटल असिसटेंट' है, हर

कलश प्रवाह से पहले का दृश्य चन्द्र भागा के तट पर पूजा इत्यादि का दृश्य

प्रश्न, प्रत्येक समस्या के लिए अंतरजाल की दुनिया में सोशल मीडिया का एक विस्तृत तंत्र है, जिसे हमने निजी जीवन में उतरने के लिए अतिक्रमण का अधिकारक्षेत्र दे दिया है तो अपनत्व की क्या आवश्यकता? जब आत्मीय सम्बोधन ही नहीं रहे, रिश्तों में आत्मीयता का करंट ही नहीं रहा तो समाज और संस्कृति का चिंतन कौन करेगा ? संस्कृति–संस्कार तो तभी बचेंगे, जब समाज का कलेवर बचेगा। वैसे भी समाज और संस्कृति तो एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और परिवार समाज की एक इकाई है।

आज जब मै बचपन में लौट आता हूँ तो झूमते–गाते गांव की वह तस्वीर याद आती है जब कृष्ण जन्माष्टमी के त्योहार पर भगवान् कृष्ण के बालरूप की अनेक झांकियां निकलती थीं। वृद्ध, जवान, मातृ शक्ति, बच्चे हर्षोल्लास से भक्ति भजन में झूम उठते थे। पूरे गांव की गलियां ड्योढियों से सज्जी रहती थीं, एक उत्साह का वातावरण सब को रोमांचित कर देता था। गांव में सात दिन पूर्व से ही प्रभात फेरिया निकलती थीं। गौरी तृतीया (माघ शुक्ल पक्ष तृतीय) के दिन कुल पुरोहित हर यजमान के घर बच्चों को एक पत्रिका भेंट करते थे, जिसमें सरस्वती, लक्ष्मी और गणेश जी का चित्र छपा होता था। कश्मीरी लोक कला से इसे सजाया जाता था। इसमें वंश की दीर्घायु, बुद्धिमत्ता और शक्तिशाली होने का आशीर्वाद भरा पड़ा रहता था। नवरेह के आगमन पर आसपास की फुलवारियों को देखने का आनंद ही अलौकिक थां। नवरेह पर भरी थाली के दर्शन की अनिवार्यता रहती थी। 'जंगत्रय' के अवसर पर विवाहिता माता–पिता के घर जाती थीं, जब शाम को वापस लौटती थीं तो उसे नमक का पैकेट, कुछ पैसे तथा अटहोर आशीर्वाद स्वरूप दिया जाता था।

विस्थापन काल में जो सामूहिक यज्ञोपवीत की प्रथा शुरू हुई है कश्मीर में तो यह एक पारिवारिक समारोह ही रहता था, शायद

यह समय की एक आवश्यकता है? गर्भधारण करने से पारलौकिक गमन तक हमारे यहां 24 संस्कार बताए गए हैं, ऐसे अनेक त्योहार, संस्कृति संस्कार है जिनके पुनरावलोकन की आवश्यकता है। पंडित ओंकार नाथ शास्त्री जी का कहना हैं कि "गाड़बत रीति है और धर्म शास्त्र में इसका कहीं कोई उल्लेख नहीं है। सामूहिक "मेखल" का अनुष्ठान गौत्र के अनुसार होना चाहिए, "काहनेथर" और "मेखल" नियत समय पर ही हों, धर्म हमें भ्रम, संशय से निकालता है, हमें धर्म पर श्रद्धा एवं विश्वास होना चाहिए। हमें दोष किसी को नहीं देना चाहिए जो समय की आवश्यकता है, हमें शास्त्रानुसार वहीं करना चाहिए। मलमास/भानमास दो नहीं एक ही हैं, हमें धर्म संस्कृति का अध्ययन करना चाहिए।"

इसमें कोई संदेह नही है कि कश्मीरी पण्डितों के पर्व एवं त्योहार विस्थापन के घटनाक्रम से अछूते नहीं रहे, उनमें कुछ परिवर्तन अवश्य ही देखने को मिलते हैं, घर परिवार में तो महिलाएं इन सांस्कृतिक उत्सवों की एक महत्वपूर्ण कड़ी रही है। विस्थापन के बाद जो किशोर थे वे वृद्धावस्था को प्राप्त हो रहे हैं और 1990 के आसपास जो वृद्ध थे उनमें से अधिकांश हमारा साथ छोड़ कर काल कलवित हो गए, एक नई पीढ़ी इस सांस्कृतिक यात्रा की अनुयायी बन रही है। शिक्षा ग्रहण करने तथा रोजगार के अवसर खोजने के लिए युवा पीढ़ी भविष्य को संवारने में जुटी है, ऐसे में यह दायित्व हम सब का है कि हम अपनी संस्कृति एवं संस्कारों, पर्वों–त्योहारों का पुनरावलोकन करें, अध्ययन के साथ साथ भावी पीढ़ी को यह विरासत सच्चे अर्थों में सौंपकर धर्म एवं संस्कृति की रक्षा करें। मनुस्मृति में कहा भी गया है कि

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत्।

अर्थात् : जो व्यक्ति धर्म का विनाश करता है, धर्म को क्षति

पहुंचाता है तो धर्म उस का ही नाश कर देता है और जो व्यक्ति धर्म की रक्षा करता है, धर्म भी उसकी ही रक्षा करता है। इसलिए इस भय से धर्म का हनन् कभी नहीं करना चाहिए कि नष्ट हुआ धर्म कभी हमारा ही विनाश न कर दें।

पर्व/त्योहार तो हमें प्रकृति से जोड़ते हैं, यह मनुष्य और प्रकृति के मध्य सामंजस्य स्थापित करने का एक सशक्त माध्यम है। ये सभी सांस्कृतिक आयाम हमें धर्म एवं आध्यात्मिक अनुभूति के साथ जोड़कर इहलोक एवं परलोक को भी सुधारने की शक्ति प्रदान करते हैं। सामूहिकता से मनाया जाने वाला पर्व हम में सामूहिकता का बोध कराता है और "त्योहार", तिथि और वार के योग से बना है जो हममें विश्वास जगाता है।

यह विषय अपने में व्यापक है। यदि हम गांव की संस्कृति में लौटते हैं, जहां देश बसता है, यदि हम पारिवारिक इकाइयों को दृढ़ता प्रदान करते हैं, यदि हम दिलों की दूरियों को मिटाकर इन सामाजिक उत्सवों को मनाकर दूरियों को पाटते हैं, तो विस्थापन काल में जो सांस्कृतिक उत्सवों की यात्रा धीमी पड़ गई है उसे अवश्य ही गति मिलेगी। भले ही आज समय अनुकूल नही हैं, बाधाओं, संघर्षों का दौर है, जीवन क्षणिक है, बिखराव है, तो ऐसे में अपनी पहचान को बनाए रखने के लिए हमें अपनी संस्कृति का वरण करना ही होगा और दृढ़ता के साथ अपनी मातृभाषा को भी जीवंत रखना होगा, तो संस्कृति को और जीवंतता प्रदान होगी।

JYOTISHACHARYA PANDIT PREMNATH SHASTRI - AN EVENTFUL OEUVRE

By Upender Ambardar

The legendary name of Pandit Premnath Shastri kindles a prideful sense of nostalgia and endearing reminisces. He was widely respected, publicly recognized, distinguished persona. He had unchallenged hold and command over the religious and jyotshi related knowledge. The "Panchang" popularly known as "Janthari", published by the Vijayeshwar Jyotish Karyalaya is a visible assertion of his most uplifting contribution to the community. Reverentially called as Shastriji, he had a deep understanding of the planetary placements, fall out of its interlinked combinations and the resulting interpretative impact on the human affairs.

Shastriji was born in the salubrious and tranquil ambience of the historically famous town of Vijayeshwar (Bijbehara) on Monday, Oct 4, 1920 to the noted Jyotishi and Horoscopist, Pt Aftabram Shastri and his spouse Smt Radhamali. Incidentally, Pt Kantharam Sharma, the younger brother of Pt Aftabram Sharma also had a indepth understanding of the related knowledge and was adept in the astrological calculations.

Pt. Premnath Shastri, painfully enough was deprived of the much needed motherly love, when he was only one year and nine months old. He, subsequently, received the sheltering care and safekeeping from his uncle, Pt Srikanth Sharma. He had his early and elementary education at his home from his father and later passed his Matriculation examination from the Hanfia School, Anantnag. He, then proceeded to Lahore and enrolled himself at Krishna Kishore Sanatan Dharam College to study the Dharam Shastras and the related Dharamsutras. However, sadly, he was forced to discontinue his studies due to his ill health. He came back and later on enrolled himself at the Ranbishwar Raghunath Pathshalla, Jammu where he acquired the comprehensive knowledge about the Jyotish and the religion related field.

On successful completion of his studies, he returned back to his hometown, Bijbehara, where he devotedly engaged himself in the dissemination of the knowledge earned to the community.

Pt. Premnath Shastri was married at a young age of 21 years to Sushree Tulsi Devi, the daughter of Pt. Govind Sharma of the village Bonagund, Verinag, district Anantnag. She was subsequently renamed as Smt Gunwati by her in-laws. She breathed her last in the year 1994 while Pt.Premnath Shastri left his mortal body at the age of 79years on Aug 28, 1999.

At a personal level, Pt. Premnath Shastri was fond of traditional clothing, when it came to dressing up. His favorite attire was the pristine "Phiran", a finely starched "Safaa" and a shawl wrapped on his shoulders. This traditional dress would add both to his personage and appearance.

Pt. Premnath Shastri was an unassuming, simple and a soft spoken person having inner calm and clarity of mind. The inherent sense of joie de vivre had added to his positive demeanor.

His pleasing and gentle mannerisms would instantly put at ease everyone who came in contact with him.

FAMILY LINEAGE

The Shastri family traces its lineage to the antiquated sect of "Bhootnath" which along with the "Bodh" and "Bhader" clans formed an integral part of the social fabric of Bijbehara in the medieval times. It is stated that barring the "Bhootnath", both the "Bodh" and "Bhader" were forced to change their faith during the oppressive rule of the Pathans in Kashmir.

Furthermore, Shastriji was born on a Monday, the day dedicated to great Lord Shiva. The day is also governed by the planet moon. A Puranic reference says that the celestial marriage of Lord Shiva and Goddess Parvati took place on Monday. It is also stated that Lord Shiva drank the poison "Halahal", that came out during the "Samundar Manthan" on Monday. As such, Monday, the day on which Shastriji was born is a religiously sanctified time span of the week. Besides, the clan name "Bhootnath" denotes the now extinct tantric Shaivik tradition of ancient Kashmir locally known as "Shiv Karmi" which was a part of the Shastri family upto Pt Aftabram Shastri's time. It is also relevant to mention that Bhootnath is one of the facets of Lord Shiva. As "Bhootnath", the great God acts as the Lord of

all the embodiments, constituting the divine cause as well as the controller of the "Panch Mahabootas". These form the essential elements of which, both, the Universe and our physical body is composed off.

SHASTRI'S HOMETOWN BIJBEHARA

Bijbehara (also called Vijbror) has its etymological root in Sanskrit word "Vijayeshwar". It was known for the most revered Shiva Vijayeshwar shrine in ancient Kashmir. The famous shrine gave the name to the town. Its sacred Aekadashi Rudra temple enjoyed widespread and enormous veneration in the entire Valley upto the medieval times. However, painfully enough, the shrine complex did not survive the onslaught of the religious fury of the medieval times, as it was burned down. The Warrior Goddess Jaya Devi known by the alternate name of Kameshwarpranandi, meaning the very life breath of Lord Shiva is the patron deity of the town. She is also regarded as the prime deity of conquest, valor and triumph. The sanctimonious temple of Goddess Jaya situated on the Jaya plateau of the town is regarded as one of the earliest Shakti Sathals of Kashmir. According to the Vijayeshwar Mahatmaya, all those who worship and pay obeisance to HER are bestowed with blessings and divine boons. The devotees would flock to the shrine on the day of Ashad Shuklapaksh Ashtami to pay their respects.

The town Vijayeshwar was a renowned centre of learning, knowledge and scholarships in the ancient times, enjoying widespread name and fame. The town was also eminently known as "Sidh Khetra"

Anandeshwar Bhairav, the senior most Bhairav amongst the Asth Bhairavas of Srinagar city is the presiding Bhairav of Bijbehara town.

SHASTRI FAMILY AND THE PANCHANG LINEAGE

The Jyotish related expertise is rooted in the Shastri family with an unbroken ascendancy of more than 300 years. As per the family lore, one of their ancestors, Pt. Damodhar is said to

have prepared the first Panchang in the Sharda script in the year 1647. The tradition was carried forward by his son, Pt Vaskak and then by Pt. Gashkak, and later followed by his noted son Pt. Aftabram. In earlier times, the Panchang was in the form of a scroll and was hand written. The Panchang subsequently was largely available in Urdu and for a brief period, it was also written in Persian during the Pathan rule in Kashmir.

HINDU PANCHANG

The Hindu Calendar called Panchang is said to have had a steady continuity right from the Vedic times. Aryabhatta (5th Century), Varahamihira (early 6th century), Bhaskaracharya 1 & II (6th and 12th century, respectively) were experts in "Jyotish" knowledge. They have hugely contributed in the growth and progression of the Panchang. The Hindu almanac is an annual publication, which follows a time tested tradition of listing dates, celestial events, religious festivals, information about the eclipses, movement of the stars and foretelling of the happenings in the context of divination. It also tells us about the and dates of Jayanti and Nirvaan Diwas of saints, religious yatra dates as well as about the "Rashi phall", impact of the Zodiac on once's life, auspicious dates and favorable timings called "Mahurat" for the wedding, "Upnayanan sanskar" and "Grah Pravesh" function or house warming.

PANCHANG TYPES

In our country, though about thirty Panchangs are in vogue but only three are mostly used for day to day reference. They are named as Shaka, Vikrama and Saptrishi etc. The "Kalyuga Samvat" purportedly dates back to 3102 B.C. The renowned ancient astronomer Aryabhatta is said to have been the first to mention it.

THE SAPTRISHI SAMVAT

The Saptrishi Samvat is also called as Lokakala or Laukikakala. It is measured by centuries and about 27 centuries are said to

be present in the overall time period of the cycle. Each century is designated after a "Nakshatra". It is mainly in use in Kashmir.

THE VIKRAM SAMVAT

It is hugely popular in most parts of the country except Bengal. It was started by King Vikramaditya of Ujjain to commemorate his momentous triumph over the Shaka.

THE SHAKA SAMVAT

It has wide acceptance in many parts of the country. It traces its origin to the time of the Varahamihira, the reputed astronomer. It is also called Shaka Kala, Shaka Bhupa Kala, Shalivahana or simply as Shaka. It is mostly used in the Southern states like Andhra Pradesh, Karnataka and Maharashtra etc. Some Panchangs follow the solar calendar and are based on the movement of the Sun from one Zodiac sign to the next. In contrast, others are called Lunar or Luni-Solar calendars as they are based on the lunar months. Furthermore, even in different solar Panchangs, a difference of one or two days can be seen in the commencement of the same month in different States in order to determine the first day of the month. This is affected by the time taken during the transit of the Sun. The erroneous nature of the year span, upon which the Panchangs are based also contribute to some variance. In some Panchangs, the year is taken to comprise of 365 days, 6 hours and 12.6minutes whileas, many believe that the accurate duration is said to be 365 days, 5hours and 48.8minutes. It is due to this reason that the year starts from the first Baisakh according to the Vikrami (or Bikrami) calendar.

The Tithi and the Nakshatra form the main components in the Panchang; the calculations of which are based on the placement of the Moon and the Sun. The Earth is set to complete one round around the Sun in 365days, 6hrs, 9mins and 9.54 seconds to be precise. In contrast to it, the Moon rotates around the Earth in 29 ½ days. The resulting 12 rotations make a total of 354 days, which is short of 11¼ days, with respect to the solar period.

Another viewpoint is that there are about 30 Mahurats during 24hrs of the day and night and one mahurat is equivalent to 48 minutes. Mahurat is an auspicious unit of time, which is believed to bestow success and favorable fulfillment to the act during this period. Etymologically, Mahurat has its origin in a Sanskrit words, "Muhu" meaning moment and "Ratha" denoting the order.

The prideful familial traditions of Panchang are presently being continued deftly by Shastriji's virtuous sons - Pt. Omkar Nath Shastri, Pt.Bhushan Lal Jyothshi and Pt.Avatar Kishen Jyotshi; with Pt. Omkar Nath Shastri enjoying a recognizable presence as a moving spirit behind the Panchang as its Editor.

The immensely popular "Vijayeshwar Panchang" continues to be an integral part of the community life, enjoying a prideful place in our households. It is simple to grasp, easy to understand and ready to serve as a reference guide for our daily socio-cultural cum religious requirements.

Undeniably, the imposing and splendid journey of Pt. Prem Nath Shastri will be cherished and remembered for a long time to come by the community. The illustrious journey initiated by Pt Aftabram Sharma at Bijbehara, Anantnag and subsequently nurtured by his two worthy sons Pt Prem Nath Shastri and Pt Kashi Nath, has now acquired a new high with the digitalization of the Panchang.

शास्त्री जी की भविष्यवाणी

कश्मीरी पण्डित ने अब द्रोणाचार्य, परशुराम तथा धनञ्जय बन कर कश्मीर जाना होगा।

1990-91

KASHYAPACHARYA PT. PREM NATH SHASTRI

The land of Kashyap Reshi has given birth to numerous luminaries. The written records speak of Nagarjuna of first century BC - Mahyana Budhism, Vasugupt eighth century-Shivsutr, Somanand nineth century -shivdrishti, Utpal Dev nineth century -Shiv Sotravali, Abhinav Gupt -Tantralok, Kshemendra eleventh century-Suvrititilak, Kalhan twelfth century-Rajtarngni, Jonaraj fourteenth century- Rajtarangni, Jagdharbhat fourteenth century-Stutikusmanjali and many others who held sway over thought process of civilizations of their era and continue do so centuries after. Pt. Prem Nath Shastri, born in Butnath family of Bijbehara, will find an equivalent exalted place in the contemporary history of Kashmiri Pandits.

From fourteenth century Kashmiri Hindus suffered persecution for about five hundred years at the hands of Muslim rulers with a brief lull during the period of Baddshah when only eleven families had been left behind. On the invitation and persistence of Pt. Raj Dhar and Bir Dhar, Maharaja Ranjit Singh sent Gulab Singh to Kashmir and thus Kashmiri pundits had some respite during Sikh and Dogra Rule. The misfortunes of the beleaguered community continued even after independence under a constitutional democracy which, with active connivance of central leadership, was twirled and twisted and interpreted in such a way so as to facilitate land reforms without compensation, disproportionate reservation in educational institutions and government services resulting in passive exodus of community in search of livelihood. The forced exodus of 1989-90 at the hands of Islamic Jihadists was the proverbial last nail in the coffin.

The ideal of a Hindu for vyavhar or activity in life is Ram as he is Maryada Parshotam. From Tritya to Dwapar the ideal is still Sri Ram but Krishna brings in a new paradigm of Sankhya, Karma and Bhakti heralding a new change with Kaala, the time. In the absence of a better substitute the word time is used for Kaala which, indeed, has a very broad meaning.

The Indian civilization which essentially is Hindu way of life,

survived six hundred years of Islamic onslaught and two hundred years of English rule because of its inherent ability to adapt to the changes. The concept of "Dish Kaala" provides necessary wherewithal for the adoption of the change. Hindus have taken a beating whenever they followed a dogmatic, rigid, ritualistic and inflexible framework. The rituals of Brahmins devastated vast majority of the people resulting in the ascension of Buddhism and Jainism. However, these religions were not inimical to the basic tenets of Hinduism. It was given to Adi Shankaracharya to reestablish the supremacy of Sanatan Dharma by bringing in rationality in the dominion of illogical dogmatism. In the later years religious and social reformers like Guru Nanak, Kabir, Dayanand Sarswati, swami Ram Tirath tried to release the people from the clutches of casteist tyranny which had led to and continues to lead to large scale conversions.

While Hindu believes in " EKAM SATYA WIPRA BAHUDA VADHANTI", truth is one but wise and virtuous say it many ways, Abrahmic religions believe in the monopoly of truth and so they consider proselytization as their bounden duty. The mere existence of an alternate point of view is an affront for them and this leads to aggression and phenomenon like Jehad. Any activism that one may witness in Hindus is only the reactionary defense and not due to any ideological forebodings.

Before writing anything about Shastri Ji I have tried to visualize the era in which he was born and brought up as also to put in context the likely set of circumstances and the situation that might have shaped his destiny in the service of community.

My first memory of Shastri Ji is from my early childhood when he had come to the place of my uncle to conduct a Hawan. During the interval he sang and gave an exposition on Adi Sankaras "SHIVOHAM" in his sweet and mesmerizing voice. Even children of my age were held spell bound by the masterly exposition and its memory is still fresh in my mind as if it is a happening of yesterday. Another miracle happened on the same day. A small girl of our family hardly four to five years of age became unconscious and whole function came to stand still. The girl was brought to the Hawan mundup and Shastri Ji put his hand on the face of the girl . After a few moments she regained her consciousness and everything became normal.

Shastri ji had his early childhood education at Bijbehara and Anantnag and subsequently he proceeded to Lahore and Jammu for further studies. This was essentially Gandhi- Nehru era and almost every impressionable youth was highly influenced by Nehru's oratory and his command over history of India and world. Dr. Karan Singh in his autobiography "Heir apparent" refers to this influence - one would get impressed when Nehru Ji would speak about "vast historical forces sweeping the world". Obviously, Nehru's Discovery of India was a favourite book of Shastri Ji.

My uncle who was almost of same age group as Shastri Ji, would often tell the fascinating stories of markets of Lahore like Anarkali and also about influence of Swami Ram Tirath on the students of that era. It would be pertinent to point out here that Dr. Iqbal was highly influenced by swami Ram Tirath in his earlier years before he turned to writing about pan Islamic vision in his poetry.

Swami Ram Tirath was a favourite of Shastri JI. Like him, Shastri Ji tried to reform community; the odds were heavily against him and resistance was stiff but like earlier detailed reformers he persisted. Our own family pundit Ji who is a very knowledgeable person and well versed in Karma Kanda, would often argue against these changes but majority of people understood the noble intentions behind the change and thus abided by him. Shastri Ji had a complete understanding of artificial divisions in the small community of Kashmiri Pandits like Gaur, karkun, Bohr, malamasy, banamasy,Shahruk, gamuk,etc as also the potential of these divisions to wreck havoc on the community in the future. He would emphasize the essential unity of the community and would plead for celebration of Shivratri, Janam ashtami etc. on same day.

It appears as if Shastri Ji had a premonition of the hard times that were to befall on the community in future. The number of inter community marriages is worrisome and is indeed an existential threat to the fragile community. In his discourses Shastri Ji would often address different segments of society. To youth he would talk about essence of sanskars and to elderly he would advise about spirit of accommodation, love and affection.

These attributes need to be inculcated as they have the potential to save the community from extinction.

Shastri Ji was an eloquent communicator. In his youth the means of communication were scanty but he used, Hawans, Mekhalas etc to pass on his message of reform and change. In later years he also used audio cassettes and above all Vijyshwar Panchang to communicate effectively with his audience.

Shastri Ji had mastered Vedas, Upanishads and Puranas at Ranbir MahaVidyalya and passed Shastri examination in first class. He had a photographic memory and thus he could quote from any source at the spur of the moment. His treatises on Lal Vakhs, Bhagwat Geeta, Panchastavi, Bhawani Sahranam, Mahimna stotr, Bahurup Garb amply demonstrate the scholarship of Shastri Ji. In the masterly explanation of LalVakhs he frequenly quotes Upinashads and other Shastras in addition of Sanskrit rendering of Shlokas by Baskaracharya and Ramacharya. His eloquence and oratory flowed from his mastery over Hindu mythology.

Shastri Ji had such a sweet voice as if mata Sarswati with her Veena had made her abode in his throat. His pronunciation of Sanskrit words was like Nambodaris of Kerala but his accent and tone was original Kashmiri. It created a unique pattern of singing shrutis that could not be replicated anywhere in the world. The audience would remain spell bound when he would sing shrutis from various texts.

The ancestors of Shastri ji have been bringing out Nakshetra Patri for more than three centuries. They may also have been part of centuries old tradition of reviewing and revising process of Nakheshtra Patri at Vechar Naag before final publication. It is said that famous historian Stein visited the ancestral house of shastri Ji and so did Moti Lal Nehru. But Shastri Ji's ancestors remained rooted to the ground. Shastri Ji himself used to do gardening tend cows as a hobby.

The circulation of Nakeshtra patri was limited to family pundits only before the period of shastri ji. While taking over the publication of the Jantri, shastri Ji made a bold prediction that

Sheikh Mohd Abdullah, then PrimeMinister of Kashmir will lose his chair. This forecast catapulted shastri ji to a new league. He used this event to popularize the Jantri and this was the beginning of its present Awatar "Vijyshwar Panchang. From ascertaining Tithi in the morning to daily pooja, prapyon , Janam Din Pooja, date of eclipse,Mahurats for various functions and even for antim sanskar, one has to revert to Panchang for guidamce. Post exodus role of Panchang has become all the more important as it is the only link with our rich heritage. For Kashmiri pandit Diaspora Panchang is certainly the 'Vade Mecum'

The principles and the belief system by which shastri Ji lived were firmly anchored in tradition but he was ready to accommodate modern, logical and scientific changes wherever necessary in the larger interest of the community. He eloquently explained Vedaas and Upnishadas but he was equally comfortable with speeches of Osho. Shastri Ji was a firm votary of vegetarianism. Though most of the KP's did not change their culinary habits but majority of them abides by his advice on Shivratri, Vuhrvoud etc.

Shastri Ji had a ready wit and clarity of thought process that enabled him to answer any queries of inquisitive listeners. At Umanagri Anantnag, where Shastri Ji used to come for the annual mahayagya of Swami Svayamanand Ji, a youngman questioned Him, "A Muslim woman having thoroughly washed her hands with soap and an uncouth, unkempt Hindu lady, both offer me a glass of milk, which one would be pure" Shastri ji, quoting shastras, replied that more than ebullitions and use of soap etc. it is the question of belief and faith in your heart and good intentions of the serving lady that would decide the purity of the milk.

Last public function of Shastri Ji was at Svyamanand Ashram Muthi where he was felicitated along with Dr. BalJi Nath Pandit and Janki Nath Koul Kamal. I had the honour of hosting that function. First in the list of speakers was son of late janki nath Koul Kamal but he started with a Leela taking unusually long time to complete it. Shastri Ji got irritated and with skin of my teeth I managed to skip in Dr. Balji Ji Nath pandit. During the

course of his speech, Dr. Sahb urged Brahmins to guide the people in various daily chores including how to make a Janeu (YONYA) from cotton thread. Shastri Ji retorted, "do you think this is the job of the Brahmins". However, once on the stages all the bitterness was gone and he was all smiles. He spoke for about one and half hour on Matsya Awtar of Vishnu and enthralled audience as usual.

Shastri ji during one of his speeches told his audience that in his younger days he would go to a secluded place and start Dyana and pranayam for hours but soon he realized that karmyoga was his path and to enlighten kashmiri pundits was his destiny. Shastri Ji knew very well that the community was at the crossroads of civilizational churn and would become extinct if not guided properly about its rich heritage and sanskaras. Thus Shastri Ji became true and dedicated ACHARYA of progeny of RISHI KASHYAPA. Hence, with all humility, I give the title of " KASHYAPACHARYA" to pt. Prem Nath Shastri" and exhort all Kashmiris to refer to him by same title as a sign of gratitude from a grateful and indebted community. Shastri Ji dedicated the his life in the cause of emancipation of kashmiri Pandits and the community reciprocated his love and affection in same abundance.

In his biography of Nehru, Sarvepally Gopal writes that if Nehru had only written "Discovery of India" and "Glimpses of world history" and done nothing more, he would still have earned his place in the history. By same analogy if Shastri Ji had only published "Vijeyshwar Panchang" and nothing more, even then he would have earned a coveted place in the history of Kashmiri Pandits but obviously his karma was far beyond that horizon.

For last two decades Pt. omkar Nath Shastri has held aloft the torch of Gyana and dedicated himself to the service of the community. He has also been ably assisted by Jyotshi Bushan Lal Ji, Jyotshi Awtar Ji and Vimarsh in this endeavour. Pt. Prem naath shastri was like a colossal banyan tree and obviously, it was difficult for anyone to come out of that shadow but Pt. omkar nath Ji Shastri has held his forte and come out with flying colours.

The most important contribution of Pt. Omkar nath Shastri is

the establishment of "Pt. Prem Nath Shastri Sanskritik Shod Sansathan".In addition of publishing several books and free Sharda primer, two Dharmik Sammelans of kashmiri Pandits, one hundred and eight Hawans across length and breadth of India and two Maha Chandi Yagyas have been held under its auspices. Besides several seminars and birth and death anniversaries of Pt.Prem Nath shastri were also celebrated at Tirath Raj Matan, mata Zeshta Asthapan and Harish Chandra Ghat Bijbehara. Some slow down has occurred in the activities due to the pandemic but writing and publication work is an ongoing process in the Sansthan.

Krishna and Preduman koul
8/4 Hazuri Bagh Bohri
9419141257, 9419141380

लल्लेश्वरी जी कहती है :

लज़ कासी शीत निवारी
तृण जल करी आहार
यि कम्य उपदेश कोरुय बटा
अचीतन वटस सचीतन ध्युन आहार

स्वचर्मणा ते रक्षति शरीरं
करोति नित्यं तृणवारि-भोजनम्
परोपदेशिन किमु हंसि चेतनम्
अचेतनस्योपरि प्रस्तरस्य।

अर्थ : लल्लेश्वरी कहती है हे मनुष्य! भेड अपने ऊन से वस्त्र रूप में मनुष्य के शरीर की लाज को ढकता है तथा ठण्ड से भी मनुष्य को बचाता है। यह भेड़ केवल घास खाता है और पानी पीता है। हे मनुष्य ! यह किस ठग ने अथवा किसी क्रूर शास्त्र ने आप को उपदेश दिया है कि जड़ पत्थर को जीवत पशु की बलि चढाव।

LAL PRAKASH VISION FOR ALL

Late Dr. Phoola Koul/Pandita

The great contribution i.e., Yearly Panchang has kept all Kashmiri Pandit brothern united till date. It has become possible because of Pt. Prem Nath Shastri otherwise Kashmiri Pandits would have lost the greatest treasures received by them in inheritance. From daily sadhna, religious traditions, routine rituals, practices and precedances to miraculous job of calculations on the basis of astrology. The beads of all above things are integrated through Panchang. It is not only the calender of day and date but essence of life. The inspirations and divine vision to do great jobs, miraculous deeds and enhances the quality of living imbued in this book now.

Pt. Prem Nath Shastri, a live priest has been enabling Kashmiri Pandits to maintain their qualities and qualitative living through perpetuated materials through their sons. They regularly transform the riches of cultural heritage among all without any bias. Pt. Prem Nath Shastri during his life time has prepared almost all that is required by Kashmiri Pandits for all their Bhajan, Pooja, Dharm and Karm Kands to replace presence of a live priest where ever he may not be available. He has trained his sons to serve the community. Sh. Omkar Nath Shastri this time is holding this mission as head alongwith his brothers and serving the community in preservation of the richest virtues of culture.

During his life time Jyotshi Prem Nath Shastri performed largest Yaghya at Kheer Bhawani Temple in which each and every family was represented by some of their members received fresh impetus of being together.

Saint, Scholar and Custodian of our cultural heritage has bestowed blissful aasheerwads through singing of Shreemad Bhagwad Geeta, translating it into Urdu, Kashmiri etc so that

it will easily reach every door and every helmet. Be it Shiv Ratri Poojan, Panchastavi Poojan or Shiv Mahima Stotrum has been sung by Shastri Ji in his magnetic voice that attracts everybody's attention. Besides so many things the latest wonderful publication of his works on "Lall Prakash" which has been taken forward in tangible way by his son, Pt. Omkar Nath Shastri Ji, to reach out to a wider readership. His vision of Lal-Vakhs presented in unique manner alongwith translation of each 'vakh' by Shri Bhaskeracharya and Acharya Ram Shastri Ji in Sanskrit Shalokas.

This facility of 'Lal-Vakhs' in different languages are the essence of divinity to readers with honesty of purpose.

'Lal Vakhs' make life of her followers peaceful and happy in general but the work of Shri Shastri Ji enlightens with their captivation of reality. An example,

रव मत थलि थलि तॉप्यतन्

तॉप्यतन उत्तम देश

वरुण मत् लूक घर अॅच्यतन

शिव छुय क्रूठ त् चेन उपदीश

– वाख 88 लल्ल प्रकाश

Sanskrit Shaloka by Bhaskeracharya :

स्थले स्थले स्वैः किरणै र्यथा रविः

पतत्यभेदेन गृहेषु वाभ्रियम्।

जलं तथा सर्व जगत गृहेषु

कष्टेन लभ्यं श्रृणु तं गुरोः शिवम।।

Hindi version by Pt. Prem Nath Shastri Ji :

क्या सूर्य प्रत्येक स्थल को प्रकाशित नहीं करता

क्या उत्तम स्थल ही प्रकाशित होते हैं ?

वरुण देव क्या सामान्य जन के पास नही आते।

शिवमय होना बहुत कठिन है उपदेश की तह में जा

(प्रकृति के कण कण में ईश्वर तत्व निहित है)

इसका सरल हिन्दी में अर्थ भी दिया है।

इस का महातम यजुर्वेद के मन्त्र को भी दर्शाया है।

ईशवास्यमिदं सर्वं किञ्च जगत्यां जगत्

अर्थ : जो कुच्छ भी इस चराचर सृष्टि में हैं उस में शिव ओत प्रोत है।

श्रीमद भगवत गीता का शलोक जो इस को समर्थन देता है :

मया ततमिंद सर्वं जगदव्यक्त मूर्तिनां

अर्थ : जो कुछ भी इस सृष्टि में दिखाई देता है सब कुछ शिवरूप ही है।

IN addition to this he has tried to facilitate us all by one more mantra from Athervaved :

प्रजापति बहुदा विजायते

अर्थात् : हे मनुष्य जब आपको जड़ चेतन में शिव ही शिव प्रतीत होगा तो समझो आप की तपस्या सफल हुई।

Knowledge transfer plus confirmation of being blissful. Who other than Shastri Ji has this wonderful capacity to captivate us all.

HALLOWED GROVES OF KASHMIR – REPOSITORIES OF ECOLOGICAL HERITAGE

- Upender Ambardar

The grooves are natural undisturbed forest lands and green patches of varying sizes, which may include dales, gardens, orchards and water bodies. They are known by the ancient names of Upvan, Nandan Van, Vatika, Phulwari, Kunj, Vraksha Vatika and Uddyan. They are usually found on the outskirts of human settlements, both in the rural and urban belts. They form an integral part of the sacred geography of Kashmir as they are richly laced with religious, spiritual, puranic overtones and folk belief connotations. They are dedicated to Gods, Goddesses, area specific governing deities and super natural beings. They are usually found in tradition bound ethnic societies, where social customs, religious restrictions and indigenous belief systems operate. Their aim is to incorporate ecological sensitivity and respect for nature. The water bodies of various types comprising holy springs, lakes, rivers, and rivulets form an integral part of the sacred ecological heritage. The Kashmiri Pandits being the indigenous natives of Kashmir enjoy an age old emotional bonding with all the elements of nature as it is a celebration of divinity for them.

According to Vedic thought, Mother Earth is the Bhu Devi, Vanaspati is the overlord of forests, Naag is the reigning deity of the spring, ponds and lakes, Shakambari is the goddess of vegetation, Krishnapingla is the deity of harvest and Annapurna is the Goddess of food and nourishment.The same concept regards trees as a blissful and sacramental lord of the forests. The sacred texts of Hindus make forests divisible into three types. They are Tapovan or forests of austerities, Mahavana or majestic forests and Shrivana or venerated forests. Tapovan is the most revered and sanctified forest type as it is used for religious austerities and meditating engagements mostly by Rishis. Mahavana is the most luxuriant woodland supporting a rich forest wealth including all kinds of valuable undergrowth. In contrast to it, Srivana is usually found in the vicinity of a human settlement or a shrine. It meets the requirements of the

surrounding inhabitants in the form of forest products, fodder, timber etc.

The cave shrines in the names of different deities mostly Lord Shiva and the pilgrimage centers dedicated to different aspects of the Goddess are usually found in the mountains. Astonishingly enough, Kashmir far outnumbers any other place in the mainland in the number of cave shrines. This dimension bestows a sort of divine status to the mountains. In consequence, any kind of deforestation or infringement is regarded as a condemnable offense. In accordance with the religious folk belief of Kashmir, the trees of Deodar, Elm, Mulberry, Chinar called Boen, Birch and Walnut are holy and sacred trees. The Deodar is the holiest one being Dev or divine tree. The majestic Chinar or Boien owing to its benevolent sheltering and grandiose form is synonymous with Bhawani or the Mother Goddess. Likewise, the Mulberry tree is regarded as the abode of Bhairavas, Yakshas and other super natural beings. Elm is believed to be the personification of the Vignaharta Lord Ganesha. Similarly, the Birch tree abundantly found in the high altitudes of Kashmir is also laced with home grown folk belief, connecting it with the Goddess Saraswati. The ethno botanical tree and plant species like Neem, Bilwa, Tulsi and creeping undergrowth like Kusha and Darba grasses due to their association with varying deities also enjoy celestial status. The high- altitude lakes of Kashmir namely Sheshnag, Vishnu Sar, Krishnasar, Gang Bal, Neel nag, Satsar, Gadsar and Vishnupadsar likewise have also acquired heavenly status due to their association either with the specific Naag deity or other Godheads.

The Manasbal lake situated in Sumbal village is also a sacred lake due to its Puranic association with Mansa Devi, the snake Queen Goddess, who happens to be the divine sibling of Vasuki Nag, the Serpent King. The world- famous Dal Lake of Srinagar, having the pre- historic name of Mahasaritsar is also a venerated lake due to its folkloric and Puranic association with the native Goddess Sureshwari and the river Ganga Mata. As per a native oral tradition, its sanctimonious ambience is also enhanced due to abundantly growing of the sacred water plant Lotus with its leaves, stem Nadru and the fruit Pambach having their association with the Tantric tradition. Interestingly enough, the

Vedic name of Lotus is Shripushpa and is associated with Goddess Lakshmi who as per mythology, sits on this divine flower and is hence also known as Padma Lakshmi. Another Puranic belief regards Lord Brahma to have arisen from the navel of Lord Vishnu being seated on the holy Lotus.

The presiding deity of Dal knows as Dal Raza is invoked by many Kashmiri Pandit families of Rainawari, Srinagar to be divinely present during their Shivratri puja. Likewise, the fresh water Wular Lake known by the antiquated name of Mahapadamsaras, is as per an oral lore, the abode of one of the Serpent kings -Neelnaag. One more verbal tradition ascribes its holy standing to the luxuriant presence of water chestnuts in it, which also have underpinnings of Tantric connection. Its presiding deity is known as Wular Raaz. Interestingly, the Wular Raaz is also invoked to be present as a divine witness during the Doon Mawas ritual of Shivratri puja by many Kashmiri Pandit households. Puranic narratives also confer godly status to the river Jhelum known by the Vedic name of Vitasta as she is said to be the manifestation of the Goddess Parvati. Even the associated tributaries of the Vitasta like Liddar, Dudhganga, Shaliganga, Sukhnag stream, Brengi and Vishavalso enjoy the holy status due to their association with the different deities.

The Brari Nambal lagoon located in downtown Srinagar, known by the reverential name of Braeri Maej is also a venerated island grove. It is laid with many chinar trees and houses the shrine of the Mangleshwar Bhairav, one of the Ashta Bhairavas of Srinagar city. The quest for ecological concern seems to have driven our ancestors to link the various meadows, mountain gorges and pastures etc. with the multi-layered matrix of Puranic narratives. Accordingly, many of them are named after many Godheads. It is evocated by the names of Gauri Marg, now famously known as Gulmarg, Nandi Marg, Gopadhari hillock, Neelkanth pass, Kamla Van, Madh Van, Sharda Van, Bhadra Van and Indra Keel. The supplication of various water bodies with the holy names of the deities have also ensured their protection and conservation. The springs of Tulamulla, Pokhribal, Vicharnaag, Durga Naag, Takshak Naag, Pap Haran Nag, Mattan Nag, Aneek Naag, Gautam Naag, Devibal Naag, Veri Naag and Karkote Naag come under this category.

The Gang Khai, Gang Noar and Gupta Ganga also become sacred due to their association with the river Goddess Ganga.

The Chinar tree laden Harischander Raza temple of Bijbehara, Shailaputri shrine of Baramulla, Narain Bagh of Ganderbal and Mangla Devi shrine of Srinagar downtown have also escaped their denuding and defilement due to the same religious conviction. However, the most venerated Chinar trees of the Saptarishi spot on the circumambulatory trek of Hari Parbat today stands robbed of its holy standing due to its encroachment post exodus. Another oral folklore bespeaks of now non-existent Sapt Rishi holy grove of south Kashmir where Sapt Rishis are said to have assembled and prayed after its submerged land emerged out after the drainage of Satisar lake. The belief appropriation of the Elm tree with the deity of Lord Ganesh has likewise ensured the preservation of the sacred shrine of Ganesh ashtapan at Hanand Chawalgam, Kulgam. In accordance with an aged legend, centuries back, a sacred grove existed along the Mahadev mountain range extending from the Harwan hamlet to the present day Dachigam National Park. The sacred Gupt ganga shrine, Shalimar Vatika and the most hallowed Shankar Pal formed a part of it. Gopi tirth situated in this holy tract is the only shrine in north India, where according to an oral folk belief, Lord Shiva is supposed to have assumed Mohini form. The holy groove supported a unique and diverse ecosystem possessing rich floral wealth, scrub growth, wildlife and feathered species amidst its dense coniferous and alpine plantations. According to a popular verbatim lore, the world famous Shaivites namely Abhinav Gupt, Utpaldev, Vasugupta and Somananda etc are said to have stayed here and scripted many Shaivite inscriptions. A connecting fable even locates a holy spot where Acharya Abhinav Gupt is said to have done his Sadhana during his stay in the said grove.

One more legend says that Shalimar owes its etymological origin to a Sanskrit word meaning an abode of enchantment and endearment. It is associated with the building up of a shack for the sage Sukrama Swami by his sadak monarch of the time. Shalimar of the yore was a famous Vatika due to its aesthetic ambience. As per another legend, centuries back, a sacred grove existed around the Devi Angan of the Hari Parbat

hill. Most of the socio- cultural festivities of the Kashmiri Pandits used to be hosted here in the ancient times; the foremost amongst them being Navreh, the Kashmiri new year festival.

Presently, the Zethyar shrine of Srinagar is the foremost sacred grove of Kashmir, while the Shivalya temple situated in Chotta Bazaar area of Srinagar is a known temple garden. The pre-exodus Baba Dharam daas Mandir at the upper Sathu Srinagar housing plentiful of chinar trees and ornamental flowers was also a famous temple garden of yesteryears. Post exodus, a reversal has happened as most of its landed property stands encroached upon and sold out. A few histographical accounts also make a passing reference to the Bagh Jogilankar, Rainawari. It seems to have been a famed Mandir Vatika for the wandering Sadhus for taking shelter. Likewise, the present day Mandir Bagh locality of Srinagar, is said to have been an acclaimed temple garden in earlier times. It presently survives only in our folk memory merely as a name as it is now a densely populated habitation. The two prominent cremation grounds of Srinagar situated at Karan Nagar and Noorbagh, having a multitude of chinar trees are also bracketed under the category of sacred sites. An array of indigenous frightening legends woven around them have ensured their preservation and protection.

Unquestionably, ancient Kashmir had the privilege of having an ecologically friendly and environment sensitive civilization. A warm and holistic camaraderie existed between the inhabitants and nature as Prakriti for them was a revered aspect of Mother Earth. Water for them was the sustainer of life and all the fauna enjoyed divine status as they are the holy mounts of different deities and godheads. Even today, the ponds in some temples are sacred as fish or Matsaya as per a puranic thought symbolizes Lord Vishnu's Matsaya incarnation.

In antiquity, every village and residential locality of Kashmir had a venerated tree known as Sathal Vriksha. In consonance with the timeless opinion, God is present in every aspect of nature which in turn gives a super natural dimension to ecological co-existence and environmental conservation. Pollution of any kind including any sort of ecological disturbance and denuding of forest wealth was therefore regarded as an impious act.

MAHAMAESHVAR ACHARYA ABHINAVAGUPTA – A JOURNEY THROUGH KASHMIRI FOLKLORE & ORAL TRADITIONS

By : Upender Ambardar

Acharya Abhinavgupta, also known as Abhinavguptapada was a multifaceted and an all-encompassing genius of Kashmir, having global standing and eminence. He, besides being a world renowned Shaivite scholar and internationally acknowledged philosopher, was also a time-honoured writer, poet, unparalleled aesthetician, mystic, musician, dramatist, logistician and intellectual of the highest order. He is also credited for his highly and critically written creative outpourings, multidimensional writing approach and enormous originality on diverse subjects and interests. It has bestowed a sort of epic dimension to his entire weave of creative writings. His encyclopaedic knowledge on varying disciplines had earned him the exalted title of Abhinavgupta from his numerous highly acclaimed gurus and teachers, under whom he had studied. He is also known for his amazing wizardry with the words, depth of knowledge, literary inventiveness and above all, his forays into hitherto unthinkable fields, which even till the present time stands unequalled and unmatched. He is rightly regarded as the first and last stalwart Sanskrit scholar cum Shaivite philosopher, who had mastered all the ancient and contemporary philosophical streams.

Many happenings and occurrences allied with Acharya Abhivangupta are a prized part of Kashmiri oral history and folk memory. The have been passed on to the successive generations by word of mouth. According to the oral tradition, Acharya Abhivangupta was born on the eleventh day of the *Shukla Pakash of the Jyeshta* month corresponding to the English month of May or June. The said day incidentally happens to be the holy

day of *Nirjala Ekasdashi*. The Jayanti celebration of Acharya Abhinavgupta forms an important part of tradition of Swami Ram Shaiv Trika Ashram, Fatehkadal, Srinagar, Kashmir. The said Ashram happens to be the oldest and the most celebrated Shaivite centre of Kashmir in the contemporary times. It was established in May 1884 by the renowned Shaivite saint philosopher of Kashmir, Swami Ramji Maharaj. He is famously remembered for his voluminous services and contribution to the revival of Kashmir Shai. darshan, which sadly enough had almost phased out due to the upheavals of tumultuous times during Pathan rule. The devotes of the Ashram would celebrate Acharya Abhivangupta's Jayanti with the preparation and pooja of turmeric mixed rice, locally called *Taher*, amidst the recitation of Bhairav Stuti written by Acharya Abhinavgupta himself. The reputed scholar and noted Shaivaite of Kashmir, Dr. T.N.Ganjoo, who also headed the said ashram authenticated this Jayanti related tradition of the ashram. This tradition was also affirmed by Shri. Bansi Lal Wangnoo, an ardent devotee and a well versed Ashramite.

Acharya Abhivangupta's birthday also finds a reference in an old *Sharadha lipi* almanac scroll of late Pandit Laljoo Braroo Shashtri, who lived more than 350 years ago. He was a resident of mohalla Purshiyar, Srinagar and was a reputed Shaivaite scholar of his time. The almanac of the *Loukika* era, 4732 records the holy birthday of Acharya Abhivangupta as *Jyesht Schukla Paksh Ekadashi (Nirjala Ekadashi)*. It was later on also corroborated by late Anand Pandit Shastri, who is regarded as the last reputed Kashmiri scholar of the *Shivopadhyea* lineage.

One more folk legend states that at the time of Acharya Abhivangupta's entry into the Bhairav cave at Beerwah, where he attained *Nirvana,* a large number of his followers and admirers had gathered at a vast open stretch of land in the vicinity of the cave to bid adieu to him. The said area, as per a legend, was bereft of any source of water at that time. They are said to have approached and apprised Acharya Abhinavgupta about the same as they required it for their physical purifications and religious rites. As per the lore, Acharya Abhinvagupta is said to have visited the spot and dislodged a rock lying there with help

of his hand stick. An astonishing miracle is said to have happened with the springing up of a freshwater pond at that spot. To commemorate this miraculous happening, his devotees are said to have named the entire area around the pond as *Swaranpath*, a Sanskrit word meaning the golden trail. The original articulation of this word has now got obliterated with the passage of time. It is presently known as *Sonpath*. It has now grown into a full-fledged village in tehsil Beerwah, district Budgam. The holy pond, painfully enough, has now lost its sanctimonious nature due to the change of times. The connecting legend also opines that about 12000 of his followers followed him to the cave as a parting gesture to their most revered and venerated Guru. It is in stark contrast with the number given in the present-day chronicles, which puts it as a mere 1200. The number 12000 has wide acceptance among many of the inhabitants of the area with whom the author interacted during his visit there. Pt. Somnath Pandit, a well known devotional poet endowed with spiritual disposition and an erstwhile native of village Mahind, Anantnag, presently putting up at Nagrota Jammu, also spoke about that the number of accompanying followers being 12000. He substantiated it with an old Kashmiri devotional poem written by late Sh. Maheshar Nath Raina, wherein the escorting followers are said to be 12000. Late Sh Raina was an original resident of Frisal Kulgam, who had later on shifted to Bijbehara, Anantnag. Sh M.L. Ganjoo, a writer and a noted Persian scholar, also a native of village Frisal , Kulgam added further that Sh. Maheshar Nath Raina had also translated Shrimad Bhagwat Geeta into Kashmiri, named as "Lola Geet". Another Kashmiri devotional composition of Late Sh. Maheshar Nath Raina centred around Acharya Abhinavgupta runs as:

"Abhinavgupt Aachaer Ouas, Jaanane, Geeta Paanie Poojaie Sano, Panthai Dhraav Bah Saas Chaet Heath Panai, Vyapth

Characher Gaevaan Voat Touth, Yete Shiv Shakti Che Maelaan, Chaeth Vimrush Diptimaan Bhagwan" (meaning Acharya Abhinavgupta accompanied by 12000 devotees went to the cave where Shiv and Shakti merge into one...)

The said hymn was recited in many Kashmiri households prior to their exodus from Kashmir. It was also recited by the devotees when journeying to the Acharya Abhinavgupta cave shrine at Beerwah.

Another lore advocates that Acharya Abhinavgupta had undertaken a pilgrimage of the holy shrines located in the neighbourhood of the cave before his entry into it. His yatra to the sacred shrines is said to have run into many days. It seems most probable that he may have visited and paid obeisance at Poshkar Nag, Narain Nag, Gangjattan and Sitaharan as they enjoy reverence even to the present times.

It is pertinent to state that Kashmiri Pandits till their exodus would often offer pooja and undertake pilgrimage to Nilnag , Sitaharan (now named Sutharan), Raithan and Badipur shrines. All of these are situated around the area surrounding the cave in the present-day district Budgam.

The Beerwah hillock cave is variously known as Abhinavgupta cave, Bhairav guffa and Bhat gouff. The folklore also speaks that Acharya Abhinavgupta entered the cave amidst the loud recitation of self-composed Bhairav Stuti, "Vyapth *Characher Bhaav Vishayshum, Chin Mai Ekam Anantum Anadhim, Bhairav Nathum Anath Sharanyum, Taenmai Chintaya Hardhivandya...*" Once inside the cave, he is said to have performed pooja to the Shivlinga. A connected legend also says that there were once twelve Shivlingas inside the cave.

The author could spot one Shivlinga during his visit to that cave, but insufficient lighting carried by him proved to be a hindrance to locate the others. One more cave shrine fable stipulates that Acharya Abhivnavgupta, at the end of the pooja, is said to have offered his material *Panch Mahabhootas* - Akash (ether or space), Prithvi (earth), Jal (water or apa), Taej (Agni or fire) and Vayu (air) to the presiding deities of these respective five great elements, of which the physical body is composed.

It is said to be the highest yogic kriya in which the Individual Soul or *Jeev Atma* merges with the *Param Atma* or the Universal Soul, to achieve the *Shiv Dhaam*. It is known as "*Shiv Vilai*" in Shaiviet practice. In accordance with it, in Kashmiri tradition, the death anniversary of realized saints is usually known as *Vilai Divas* and not as *Nirvan divas*. In the aftermath of the unification of the physical *Panch mahabhootas* with that of the *Cosmic Mahabootas*, the corporeal body is said to vanish from the sight. The Bhairav cave lore states that Acharya Abhinavgupta underwent the same yogic kriya. The famous Yogini Lal Daed and the legendary Saintess Rupa Bhavani are said to have undergone the same practice in which their physical bodies become invisible.

The Acharya Abhinavgupta cave shrine used to witness annual pilgrimage every year. The smooth running of the yatra got disrupted in the aftermath of the Pakistan sponsored tribal raid in 1947. The last yatra successfully undertaken to the cave shrine was in the 1980, when ritualistic pooja was performed in the cave smoothly. However, sadly enough, the pilgrimage was disrupted in the subsequent year of 1981 when the ongoing pooja was forcefully stopped by some disruptive elements. This yatra was headed by the reputed Shaivite and famous scholar Dr. T.N. Ganjoo. It included Shri Jiya Lal Razgaroo, Shri Moti Lal Zadoo, Shri Pushkar Nath Seeru, Shri Iqbal Nath Kenu, Shri Rajnath Raina, Shri Triloki Nath Bhat , Shri Shayam Sundar Shashtri, Shri Janaki Nath Mantoo, Shri Damodhar Bakshi and Shri Sanjay Raina. In consequence, apart from an FIR, a complaint was also filed in the high court Srinagar under the case titled "State vs Damodar Bakshi". Shri Damodar Bakshi at that time functioned as President, Kashmiri Pandit Sabha, Bangil area Budgam.

Afterwards, during the global Acharya Abhinavgupta millennium celebrations, permission to have a religious pilgrimage to the cave shrine at Beerwah Budgam was denied to the devotees and the entire area surrounding the cave was put under barbed wires by the administration. In recent times the cave hill is said to be under threat due to quarrying carried around it. In this regards, a PIL was filed by social activists Shri Veer Saraf and Mr Tanveer Khan a few years back.

According to a popular lore, Acharya Abhinavgupta was a people friendly saint, scholar cum philosopher who is said to have dared to shatter the then prevalent stereotypes of narrow mindedness of the supposed caste supremacy and gender prejudices. It is exemplified by the fact that he is credited to have given the appellation of *Shiv yoginis* to the female shaivites, which was unheard of at that time. It is evocative of his fondness for the ordinariness in the social fabric and speaks of his protagonist concern for the disregarded ones in the society.

He was also known for his open-minded streak of mind and socially conscientious perception. A few veiled indications of it are said to be available in his Shrimat Bhagwat Gita commentary titled "*Geeta Sangrah*". One more lore believes that Acharya Abhinavgupta conducted discourses at populated areas of the then Srinagar city. The area seems to be the ones starting from the present day Maisuma locality of Srinagar city. The holy shrine of Anandeshwiar Bhairav, the senior most Bhairav amongst the Asht Bhairav of Srinagar city, stands here. Acharya Abhinavgupt composed his famous Bhairav Stuti in praise of his most favourite God, the Lord Shiva in its premises on the day of Posh Krishna Paksh Dashmi, corresponding to the December / January month of the English calendar, in 968 AD. This day also happens to be the jaynati diwas of Anandeshwair Bhairav. The native lore also regards this day as Acharya Abhinavgupta's Vilai Diwas. The present day Maisuma locality of uptown Srinagar owes its name to Makshak Swami, after whom it was named.

Undeniably, the unchallenged intellectual grandiosity and literary grandstanding held by Acharya Abhinavgupta continues to be an integral part of our illustrious past. His life and highly acclaimed work instantly take us across and back to the times of exalted antiquity. All the places and the spots associated with him are our treasured and prized possessions. They need to be preserved for posterity.

SANSKAARS IN THIRD DECADE OF EXILE – THE CHALLENGES OF BEING

Dr. R.L. Bhat1

Aborigines of Kashmir are entering the fourth decade of their exile from the ancestral land. Those born around 1990, the year of Exile, have entered married life. That means a generation of the exiled Kashmiri Pandits, who themselves have not had a firsthand experience of the life in the ancestral Kashmir, are brining forth a new generation. Thankfully, their own parental generation did much to preserve their socio-cultural ethos. Struggling against heavy odds they did much to keep their language, traditions and other mores of cultural legacy alive. Much as the multiplicity of organizations and outfits has been a cause of concern, the individual and collective efforts of these crusaders has been a commendable endeavour to keep the flame of home and land burning. Prem Nath Shahstri Shodh Sansthan is one such organization. One still remembers its inaugural three-day convention held about a decade ago, when the critical need and suited action was discussed. That work has continued apace, due to the consistent efforts of Shri Omkar Nath Shastri. The 108-havanas, which he conducted at various dharmasthals in Kashmir and outside Kashmir, have kindled an awakening of the religious lore, cultural anchors and dhaarmik traditions among the people.

Likewise, the great struggle of the community for the legislation of Shrine Bill, under the auspices of Prem Nath Bhat Memorial Trust, has promoted an acute consciousness of the temple heritage prompting the ethnic Kashmiris to revisit, revive and refurbish the landmarks of the culture and ethos of Kashmir. A directory titled 'Hindu Shrines of Kashmir' by this author, with the help of nearly two dozen resource persons from all districts and tehsils of Kashmir, was brough out by the Trust. The directory records as many as 1403 sacred shrines spread over 634 villages, mohalas and wilderness of Kashmir. The awareness led to the different Trusts and Temple Welfare Committees getting activated and reclaiming the heritage that is fast being effaced from the land-face of Kashmir. Over the past years hundreds of mohalla and village committees have visited their respective places, conducted havanas and other sacraments,

and repaired and rebuilt many of their shrines and temples. While that struggle is bearing good fruit in this recording and reclamation, the enactment of legislation alone would guarantee full preservation and maintenance of these shrines.

Here it needs be noted that alongside the land mafia and some trusts vandalizing temples and the shrines, individual committees and persons from within the community too cannot be wholly absolved of the guilt of neglect, indifference even vandalisation of legacy. People, who cannot but be aware of the destruction of religious lands and properties in their own village or mohalas, have to be vigilant against this loss. They have to confront those who are selling out or otherwise appropriating for private ends the collective heritage of the community in exile. Many have confronted and fought the local and government agencies in Kashmir impinging upon the religious lands, but there are several instances of complicity too. The community has to be vigilant against these impingements upon the legacy.

On the cultural plane, the inveiglement of the Exile is a really dauting challenge. The philosophical and the religious lore of Kashmir has been a brilliant facet of the Indian panorama. Shaiva Siddha Abhinavagupta stands in tandem with the great Shankara in having refurbished the daarshanik outlook of what goes by the name Sanaatana Dharma. Today the two stalwarts are seen as the main architects of having re-established the philosophical core of Hindu Dharma in Bhaaratavarsha. That great effort suffered heavy damage with the incursion of Islamic zealots who thoughtlessly battered not only the sacred shrines but also the hoary traditions and dhaarmik practices of Kashmir. It was not an encounter of thoughts or ideas but a power-intoxicated bashing of aborigine practices and percepts. A thousand years after Abhinavagupta, Pandit Keshav Bhatta re-instituted the kriya paksha of Kashmir. He streamlined Karma Kaanddaa, publishing manuals of the hoary practices in a new avataara.

In the early years of Exile, Shri Premnath Shastri performed a like duty, with his yoeman's service in re-instituting the Puja Prakriya among the displaced Kashmiris, who suddenly lost all moorings. Apart from personal leadership in the struggle, he authored and published books, prepared cassettes and videos

of actual pujas performed by him. These have been guiding the community in proper performance of the rituals and practices. However, many lapses are creeping in and the gurujana are getting somewhat lax in study of the Kriya and Karma. This has the effect of unsettling people's shradhaa. On one hand we see an increasing enthusiasm among the people of the Exilede community for pujas, yagyoopaviits and other sanskaars. On the other there is a growing feeling that those who guide the people in these performances skip the study to bring out the full spirit of the kriya to fore. It is good to see more and more of the tribe taking to the profession. It would be more fruitful if they take appropriate steps to acquire greater command over karma kaandda and impart fuller instruction to the lay public. Shradhaa in the performance has to be cultivated both among the Brahmans and jajmaans to make it a more rewarding experience.

Besides, there have been some disturbing developments like the variant dates and practices. Late Shastriji had worked much to bring in a uniformity. It is generally argued that exile has brought all the adhikaariis of pujas and sacraments, as the jujmaans of various aachaars were called in the Kashmir, to the same plane. While that unison is refreshing, it is must have an unequivocal acceptance among all the dharma gurus. Only a general consonance can pave the way for this refreshing oneness. The need is to accept the diversity and work for the unison in an accommodative understanding. That would come from a deeper comprehension of the lore and legacy. The onus here is more on the guides than the guided.

At the same time, the imperatives of diisha and kaala, which have always given vitality to sanaatana, need to be seen for their merit. All this demands a constructive approach to the challenges before the community. With the third decade of exile passing out, and the return and rehabilitation not appearing as a goal very near its attainment, the need for instituting enough elements of preservation and maintenance of the religious and ethical legacy is all the more significant. One has the confidence that this resilient society would find apt instruments to meet the challenge. Efforts like this present seminar awaken the community to the challenges ahead. Hopefully, they would evolve solutions, too.

KASHMIRI PANDIT FESTIVALS AND RITUALS — IMPACT OF EXODUS

By : Upender Ambardar

The socio-cultural mosaic of Kashmiri Pandits is unique in the sense that it encompasses many majestic strands of the colourful and thoughtfully woven various customs, traditions and beliefs acquired by the community since ages. The area specific sacred geography, soothing climate, exalted socio-cultural construct and remotedness have contributed in the shaping of our unique rituals. The resulting majestic assemblage of energy filled traditions reflect the grandeour, opulence and mystique of our ambience. The various socio-religious festivals are integral to our existence. They are celebrated with unflinching faith since ages. They symbolise our timeless consistency and integrating continuity of our social matrix.

However, painfully enough, the forced exodus from our ancestral homeland has enormously injected and affected the entire weave and loom of our social fabric, which also includes our festivals. Undeniably, the present exodus has been not less than a sort of tsunami of upheavel for us. The prized and most venerated festival of Shivratri has borne the massive brunt of our displacement as most of the festival related customs were intricately linked with the iconic vitasta river and the holy springs located in the rural sgement. The foremost casualty was the custom of "Vatuk Barun", which involved the filling up of the whole set of the pooja utensils at the Vitasta ghat or the village ponds. The custom, post exodus has got substituted by filling them up with the tap water at home. Before exodus, all the pooja utensils, mostly earthenware utensils were used for Vatak Pooja. Now metallic vessels have taken their place fully.

The ritual offering to the Bhairav Doul prior to our displacement used to be meat based delights. It has now got replaced by the vegetarian dishes. The disintegrating impact has also been observed on the Resh Doul offering, which earlier comprised seven different items. Now it is mostly confined to the milk and rice. The custom of "Parmajun" and the immersion ritual of "Doon Mavas" has also been wholly impacted as their observance was at the Vitasta ghat and the village Ponds.

Similarly, the Doon Mavas linked tradition, known as "Thuk Thuk"; wherein all the good and auspicious things of life were wished and symbolically granted at the main entry door of the house now ceases to exist. One more Shivratri related rite of "Jatoon Town" involving the burning and circular rotation of the fire kindled Kangri has fully become extinct now.

Likewise, the 'Tila Ashtami' linked custom of floating the oil lit earthen lamps in the Vitasta river, village ponds and rivulets and placing of the lighted lamps at the different spots is now a part of fond memories only.

The Hora Ashtami celebration prior to Shivratri has also undergone a paradigm shift as the holiest of the holy shrine of the Goddess Sharika at the Hari parbat would witness huge congregational prayers and night long engagement with the Bhajan Kirtan and holy chants at the holy feet of Chakrishwar. A must have visit to the sacred shrine of Pokhribal and Ganishun located on the Hari Parbat parikrama trek is now restricted to a more wishful thinking.

The Shivratri related tradition of playing the game of sea shells, known as "Harun Gindoun" and handing over of the pocket money called "Heyreth Kharich" to the children on the morning of Salam have also become victims of our displacement. A prized memory is also about the festival of Navreh, which represented an ambience charged with mirth, merriment and cheer. In Srinagar city, the community gatherings clad in new attire enjoying Kehwa with the native bakery delights amidst the almond blossom of the Badam Varie at the foot hills of Hari Parbat was an unmissable sight. In the rural heartland of Kashmir, the karewas and orchards would come to life with the families enjoying Kehwa and Sheer Chai with the oven fresh breads. Additionally, the ladies festival of Zang Trai, celebrated on Chaitra Shukla Paksh Tritya has lost its pre-exodus sheen and grandeour as their congregations was a sight to be seen at the premises of the temples of Bhagwan Ramji Sathu, Shavalun Karan Nagar, Rugh Nath Mandir Fateh Kadal and Babadharem Dass, Upper Sathu in Sringar City.

Same flurry of activity was also a common sight at the picnic spots and orchards in the rural belt. After our displacement,

the tradition has become a low key affair, now mainly restricted to the individual visits of the ladies to their parental houses. The Navreh Mavas occasion has also become hit by the forced expulsion as an unending stream of the devotees would throng the sanctimonious shrine of the Vichar Nag, located in the down town Srinagar to have a ritual bath and holy dip in its sacred spring.

One more festival that evokes a joyful rememberance is that of the Shravan Purnima, wherein the faithfuls would make an arduous treak to the holy cave shrines of Swami amar Nath Ji, Harishor, Thaejwara, Mahadev and Dhaneshwar.

All these reverential shrines have now become out of bounds for the community after our displacement. The festival also invokes our walk on the memory lane as Srinagar City inhabitants would visit the Shankracharya hill to pay obeisance at the famous Shiv Temple situated there.

Many of them on their return would carry home it's sacred soil, which was most sought after for making up of the earthen Shiv Lings, known in the local parlance as Parthishor.

In a similar vein, the Janam Ashtami, locally known as Zarma Satum was a gala and religious fervour packed festival. A grand shobha yatra comprising tastefully decorated tabaleus with an accompanying impressive procession singing bhajans would make a stirring round of Srinagar City bazars, before culminating at the historical Sheetal Nath, Sathu from where it would start.

The Janam Ashtami Shoba Yatra procession likewise was an integral part of all the Pandit inhabitated areas of the rural belt. The blissful memory of Ram Navami Rath Yatra procession is also an integral part of our nostalgic rememberance.

The religious boisterousness of the procession starting from the iconic Bhagwan Ram Ji's temple, Sathu Babbarshah Srinagar is now reduced to a mere state of recollection.

The soulful Vitasta river and it's enchanting chiselled stones lined ghats also evoke fond recollection as our daily itinerary right from bathing, Sandhya, tarpan and a host of other religious rituals were performed at it's ghats and banks. The forced displacement has also considerably eroded our emotional cum

religious bonding with the Asht Bhairav Shrines of Srinagar city and other Bhairav Asthapans located at every nook and corner of the valley. All of them would see a host of religious activities on the occasion of Bhairav Jayanti's, in addition to every Saturday and Tuesday of every week.

The spiritual and devotional wear of the Ashrams of the renowned saints and seers like Reshipeer, Swami Ramji Maharaj, Bhatgwan Gopinath Jee, Swami Vedhya Dhar Ji and Rupa Bhawani Shrine have also been savaged by our exodus. The devotees and Sadhaks would off and on retreat to these Ashrams for inner peace and solace.

The devotional cum emotional bonding with the most recognisable temples of Ganpatyar, Mahakali Shrine, Shivala mandir, Ram Chander Temple, Rugh Nath Mandir, Somyar, Purshiya and Drabiyar temples also stand irreparably impacted due to our forced displacement as the people would make a daily beeline to offer obeisance.

A notable social ritual of Phroav has also become irrelevant now as it marked the weeding out of the worn out items and unwanted objects from the house. The invaluable and age old agriculture related customs known by the names of Manjhoar Taher, Gongul and Veshkum or Beeri Baran have also phased out from our social matrix due to the forced ouster from our native land. The lesser known festivals of Charie Oakdoh and Lavsa Choudah representing the Sapt Matrika Poja and rememberance day of the cat have also ended up as being irrelevant one's due to the loss of our motherland. The death related customs have also come under increasing pressure due to our exodus. The ten day long mourning duration is slowly yielding place to a more convenient four day rite of chotha. Similarly, the related Pachvaar, and Maasvaar have mostly disappeared with eventual absorption in favourably accomodative rituals of six monthly and annual traditions of Shadmos and Vaharvaar.

IMPACT AT THE SOCIAL LEVEL

At the social plane, the devastating affect of the forced loss of homeland has resulted in the total disintegration of the time honoured and value based joint and extended family system.

It has vastly eroded the instinct of familial bonding and kinship warmth. Loss of homeland has also taken a heavy toll on our living pattern. In consequence, the traditional sit down style and sit down meals form have become replaced by arm chair sitting and dinning table meals.

The home cooked meals and home prepared breads have also come under the impact of the locale shift, with the maid and the domestic help taking over the wholesome charge of the kitchen and the house; which only a few years back was an undisputed preserve and privilege of the feminine.

The pre-exodus leisurely and unharried pace of life has also immensely suffered as we are literally forced to jostle amidst the maddening crowds, while moving back and forth from the adopted homes to the workplace sites in the unfamiliar lands.

The loss of the native land has also robbed the yester year's simplicity of the wedding functions as the marriage ceremony has now become competitively ostentious one's with the addition of newly introduced practice of ring ceremony, cutting of wedding cake, free flow of booze and booz-up sessions.

A totalising deterimental impact has also been experienced by our mother tongue Kashmiri, as it has willingly been disowned as most of us now feel shy to own and communicate in it.

One more disquieting trend is the unending rise of the Ashram culture and new born love for the construction of temples in the alien adopted lands. The availability of ample free time, tendency to have quick time pass, loss of traditional occupational practices and utter disregard for the existential plight and survival crisis seem to be some of the contributory factors for the cited trend.

However, it is also a historical fact that we as a community have successfully battled with many adverse paradoxes in the past and have survived many upheavels, tumultuous twists and turbulent times.

I feel it apt to conclude this write up on a positive note with a notable quote, "This too shall pass ...., the darkest is just before the dawn".

विजयेश्वर वंशावली

श्री दामूदार
श्री वासुकाक
श्री गाश काक
ज्यो. गोबिन्द जू
ज्यो. आप्ताभ राम
प्रकाश काक
श्री कण्ठ
ज्यो. काशी नाथ
ज्यो. प्रेम नाथ
ओंकार नाथ
भूषण लाल
अवतार कृष्ण
विनोद
विमर्श
सुमन
शिवम
सत्यम
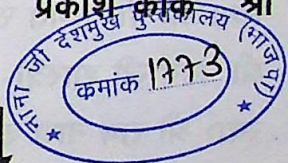
वह महानुभाव जिन को पं० प्रेमनाथ शास्त्री सम्मान, विजयेश्वर सम्मान तथा लल्लेश्वरी सम्मान से सम्मानित किया गया है।

- स्व0 पद्मश्री श्री जगन्नाथ कौल (पापा जी)
- श्री हरिण पाठक जी (पूर्व केन्द्रीय मन्त्री)
- डा0 जितेन्द्र सिंह
- स्व0 प्रो0 डा0 भूषण लाल कौल
- डा0 श्री सुशील रैणा
- डा0 श्री आर के च्रंगू
- श्री इन्द्रेश कुमार जी
- स्व0 श्री पं0 मंगत राम शर्मा
- श्री पवन जी शास्त्री
- स्व0 श्री राम नाथ शास्त्री
- श्री विजय बकाया
- श्रीमती डा0 वेद गई
- श्रीमती बिमला रैणा
- श्रीमती कैलाश मेहरा (साधू)
- स्व0 श्रीमती प्यारी राज़दान
- श्री प्रो0 अमिताभ मटटू
- श्री अवतार भटट्
- श्री मखन लाल कुकिली
- स्व0 श्री विजय मल्ला
- श्री आर के मटटू (बंगलोर)
- श्री कुलदीप कृष्ण रैणा

"मुझे पूरा विश्वास है कि
मैंने अगले जन्म में भी
कश्मीरी पण्डितों की सेवा करनी है।"

पं. प्रेमनाथ शास्त्री सांस्कृतिक शोध संस्थान

अजीत कालोनी, जम्मू